पी.एम. श्री कमला राम नौटियाल राजकीय आदर्श इंटर कॉलेज धौन्तरी, उत्तरकाशी (उत्तराखंड)

विद्यालय विज्ञान पत्रिका अंक मार्च 2026

विज्ञान मण्डल
SCIENCE CIRCLE

विश्व जल दिवस विशेषांक

P.M. SHRI K.R.N. G.M.I.C.
DHAUNTRI, UTTARKASHI

अपनी बातः संपादक परिचय
डॉ. शम्भू प्रसाद नौटियाल
(पीएचडी–जंतु विज्ञान, व्यवसाय– शिक्षक)

वर्तमान में 'पीएम श्री के.आर.एन. जी.एम.आई.सी. धौंतरी', उत्तरकाशी में शिक्षक के रूप में कार्यरत रहते हुए मेरा सदैव प्रयास रहा है कि शिक्षा को पर्यावरण और प्रकृति के संरक्षण से जोड़ा जा सके। इसी उद्देश्य के साथ 'हिमालय प्लांट बैंक' और 'गंगा विश्व धरोहर मंच' (संस्थापक संयोजक) के माध्यम से अपनी भूमिका निभाने का एक विनम्र प्रयास कर रहा हूँ।

पौधा रोपण और जल साक्षरता के प्रति मेरी छोटी सी कोशिशों को समय–समय पर विभिन्न संस्थाओं का स्नेह और प्रोत्साहन मिला है। इनमें 'स्वच्छता के हीरो सम्मान' 2024 भरतीय वन्य जीव संस्थान (W.I.I.), द्वारा 'ग्लोबल टीचर अवार्ड' (2023), 'हिमश्री सम्मान' 2024 (UCOST) द्वारा), 'राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, भारत (NASI)' द्वारा 'बेस्ट साइंस टीचर अवार्ड 2022' और 'राज्यपाल प्रशस्ति पत्र' (2013) जैसे सम्मान शामिल हैं। मेरे लिए ये पुरस्कार व्यक्तिगत उपलब्धि से कहीं अधिक, प्रकृति के प्रति मेरी जिम्मेदारी का स्मरण कराते हैं।

विज्ञान और पर्यावरण के क्षेत्र में अपने सीमित अनुभव, शोध और प्रकृति के प्रति अटूट निष्ठा को समेटकर यह पत्रिका आपके सम्मुख रखने का साहस किया है।

एक विनम्र अपीलः

प्रकृति और जल ही हमारे जीवन का आधार हैं। आइए, हम सब मिलकर जल संरक्षण और वृक्षारोपण को अपने जीवन का हिस्सा बनाएं ताकि आने वाली पीढ़ियों को एक सुरक्षित और हरा–भरा भविष्य सौंप सकें।

प्रधानाचार्य संदेश

प्रिय विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं अभिभावकों,

मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है कि हमारे विद्यालय 'पीएम श्री कमलाराम नौटियाल राजकीय आदर्श इंटर कॉलेज धौंतरी (उत्तरकाशी)' द्वारा विद्यालय विज्ञान पत्रिका 'विज्ञान मण्डल' के नवीन अंक का प्रकाशन किया जा रहा है।

मार्च का यह अंक 'विश्व जल दिवस' को समर्पित है। जल न केवल जीवन का आधार है, बल्कि यह हमारी पारिस्थितिकी और भविष्य की सुरक्षा की धुरी भी है। आज जब दुनिया जल संकट और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों से जूझ रही है, तब यह आवश्यक है कि हमारी युवा पीढ़ी जल संरक्षण के महत्व को समझे और वैज्ञानिक नवाचारों के माध्यम से इसके समाधान तलाशे।

यह पत्रिका हमारे विद्यार्थियों की रचनात्मकता, खोजी प्रवृत्ति और वैज्ञानिक सोच का प्रतिबिंब है। मुझे विश्वास है कि इस अंक के लेख, शोध और चित्र पाठकों को जल की एक–एक बूंद बचाने और प्रकृति के साथ सामंजस्य बिठाकर जीने के लिए प्रेरित करेंगे।

मैं इस सफल प्रकाशन के लिए विज्ञान मण्डल की पूरी संपादकीय टीम और मार्गदर्शक शिक्षकों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं देता हूँ।

"जल है तो कल है!"

सप्रेम,

प्रधानाचार्य
पीएम श्री कमलाराम नौटियाल रा.आ.इ.कॉ.
धौंतरी, उत्तरकाशी

संपादकीयः

विज्ञान मण्डल के इस विशेष अंक में हम प्रकृति के उस आधार पर चर्चा कर रहे हैं, जिसके बिना जीवन असंभव है। मार्च का यह महीना हमें जल दिवस और ग्लेशियर दिवस की याद दिलाता है। हिमालय के सफेद विशालकाय ग्लेशियर आज पिघलते अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। गंगोत्री जैसी जीवनरेखाओं पर मंडराता संकट और 'ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड' (GLOF) जैसी आपदाएं हमें सचेत कर रही हैं कि अब संभलने का समय आ गया है।

इस दिशा में वाडिया संस्थान और राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (NIH) जैसे केंद्रों के शोध हमें भविष्य की चुनौतियों के लिए तैयार करते हैं। उत्तराखंड की सदानीरा नदियाँ और नचिकेता ताल, डोडिताल व सहस्त्रताल जैसी झीलें हमारे पारिस्थितिकी तंत्र का वैज्ञानिक आधार हैं। जहाँ आधुनिक विज्ञान हमें तकनीक देता है, वहीं हमारी 'नौला–धारों' और 'चाल–खाल' जैसी पारंपरिक प्रणालियाँ सदियों पुराने अचूक समाधान दिखाती हैं।

जल पुरुष राजेंद्र सिंह और चन्दन सिंह नयाल तथा द्वारिका सेमवाल जैसे व्यक्तित्वों के प्रयास सिद्ध करते हैं कि समाज की भागीदारी ही असली बदलाव है। जल केवल एक रसायनिक तत्व नहीं, बल्कि वेदों से लेकर 'नीली क्रांति' तक हमारी सभ्यता का मूल है। आशा है कि यह अंक पाठकों में हिमालयी जल स्रोतों के प्रति जिम्मेदारी का भाव जगाएगा। आइए, हम सब मिलकर इस अनमोल धरोहर को सहेजने का संकल्प लें।

डॉ. शंभू प्रसाद नौटियाल
संपादक (विज्ञान मण्डल)
पीएम श्री कमलाराम नौटियाल
रा.आ.इ.कॉ. धौंतरी (उत्तरकाशी)

अनुक्रमणिका

		पेज संख्या
1.	प्रकृति का जादुई बहुरूपदर्शकः पानी के अलग–अलग रंग	1
2.	जलः साधारण दिखने वाला असाधारण चमत्कार	2
3.	राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (NIH) (जल संसाधन अनुसंधान एवं नवाचार का वैश्विक केंद्र)	4
4.	सिंचाई अनुसंधान संस्थान (आईआरआई) रुड़की, उत्तराखंड।	6
5.	भारत में जल संसाधन प्रबंधनः नीति, अनुसंधान और प्रमुख संस्थान	7
6.	ग्लेशियर दिवस 2026: (पिघलते अस्तित्व को बचाने की पुकार)	9
7.	गंगोत्री ग्लेशियरः भारत की जीवनरेखा पर मंडराता संकट (रिपोर्ट 2026)	11
8.	गंगोत्री ग्लेशियरः (हिमालय का 'सफेद विशालकाय' जो हमारी धड़कनें चलाता है।)	13
9.	वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान (WIHG):	15
10.	हिमालय की सुरक्षा की नई पहलः ग्लेशियर झीलों की निगरानी में वाडिया संस्थान की भूमिका	17
11.	ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (GLOF):	18
12.	उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में जल–प्रलय संबंधी आपदाएँः कारण, प्रभाव और समाधान	19
13.	उत्तराखंड की सदानीरा नदियाँः हिमालय का जलीय और वैज्ञानिक आधार	22
14.	जल गुणवत्ताः जीवन का आधार, महत्व और प्रबंधन	24
15.	हिमालयी मीठे जल पारितंत्र का दर्पण डोडीताल झील	26
16.	जल पुरुष राजेंद्र सिंह	27
17.	पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक जल संकटः चाल–खाल एक वरदान	28
18.	राजा भोज के जल संरक्षण कार्य	30
19.	लेक पिछोलाः पारंपरिक जल संरक्षण का ऐतिहासिक मॉडल	31
20.	आनासागर झीलः जल संरक्षण की ऐतिहासिक विरासत	32
21.	चन्दन सिंह नयालः पर्यावरण और जल संरक्षण के प्रति समर्पित व्यक्तित्व	33
22.	जलः जीवन, प्रकृति और मानव सभ्यता का आधार	35
23.	पानी और सोडियमः शांत द्रव और उग्र धातु की रोचक कहानी	36
24.	वेदों में जल का उल्लेख	38
25.	अदृश्य तत्वों का अनोखा मेलः कैसे बनता है जीवनदायी जल	39
26.	प्रति बूंद अधिक फसलः सूक्ष्म सिंचाई का वैज्ञानिक और व्यवहारिक दर्शन	40
27.	वर्षा जल संचयनः भविष्य की संजीवनी	41
28.	सरोवर विज्ञानः जल संरक्षण और जीवन का आधार	42
29.	नचिकेता तालः उत्तरकाशी की एक अनमोल नैसर्गिक धरोहर	44
30.	राष्ट्रीय धरोहर गंगाः विज्ञान, आस्था और भविष्य की चुनौतियाँ	46
31.	नीली क्रांति का संकल्पः स्वच्छ जल और गरिमापूर्ण जीवन (SDG 6)	48
32.	हिमालयी जल स्रोतों का संरक्षणः नौले–धारों की परंपरा	49
33.	द्वारिका प्रसाद सेमवाल–कल के लिए जल से जलजन आंदोलन तक	51
34.	जल चक्र प्रकृति का अद्भुत वैज्ञानिक चक्र	52
35.	उच्च हिमालयी झील सहस्त्रताल	54
36.	उत्तराखंड की लोक परंपरा में धारा पूजन का महत्व	56
37.	जल साक्षरता के अग्रदूतः डॉ. प्रमोद शर्मा और उनका 'भागीरथ' प्रयास	58

प्रकृति का जादुई बहुरूपिया: जल के विविध रंग

प्रकृति में जल किसी कुशल जादूगर की तरह है, जो हर पल अपना चोला बदलता रहता है। हम अक्सर पानी को केवल नदियों या समुद्रों में देखते हैं, लेकिन सच तो यह है कि यह हमारे चारों ओर की हवा में और हमारे पैरों के नीचे की मिट्टी में भी अलग–अलग रूपों में छिपा होता है। प्रकृति में जल के मुख्य रूप से तीन चेहरे हैं–हवा की अदृश्य नमी, आसमान से बरसती बूंदें और मिट्टी के भीतर समाया जीवन। इनमें से 'वर्षण' यानी बारिश को ही धरती पर पानी का असली और सबसे बड़ा खजाना माना जाता है। हमारे आस–पास की हवा में पानी हमेशा एक 'अदृश्य भाप' के रूप में मौजूद रहता है, जिसे हम 'आर्द्रता' या नमी कहते हैं। इसे समझने का एक दिलचस्प तरीका यह है कि हवा एक स्पंज की तरह काम करती है; गर्म हवा एक बड़े स्पंज जैसी होती है जो बहुत सारा पानी सोख सकती है, जबकि ठंडी हवा की क्षमता कम होती है। वैज्ञानिक इस नमी की चाल को 'साइक्रोमीटर' और 'हाइग्रोमीटर' जैसे खास उपकरणों से मापते हैं।

जब जमीन की गर्माहट से हवा हल्की होकर ऊपर की ओर भागती है, तो ऊपर की ठंडक उसे सिकोड़ने लगती है। एक खास तापमान पर पहुँचते ही, जिसे 'ओसांक' (Dewpoint) कहते हैं, वह अदृश्य भाप अचानक नन्हीं–नन्हीं बूंदों या बर्फ के नन्हे कणों में बदल जाती है–यही बादलों और कोहरे का जन्म है। जब ये बादल इतने भारी हो जाते हैं कि हवा उन्हें और नहीं संभाल पाती, तो वे बारिश, बर्फ या ओलों के रूप में धरती पर लौट आते हैं। धरती पर पहुँचते ही मिट्टी इस पानी का स्वागत करती है। कुछ पानी गहराई में जाकर 'भूजल' बन जाता है, तो कुछ 'केशिका जल' के रूप में मिट्टी के कणों के बीच फंस जाता है, जिसे पौधे अपनी प्यास बुझाने के लिए इस्तेमाल करते हैं। हवा की ऊंचाइयों से लेकर मिट्टी की गहराइयों तक, जल का यह अद्भुत और कभी न खत्म होने वाला सफर ही हमारी पृथ्वी को हरा–भरा और जिंदा रखता है।

प्रकृति में जल ही एक ऐसा पदार्थ है जो ठोस, द्रव और गैस-तीनों अवस्थाओं में स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। इसके रासायनिक और भौतिक गुण इतने अद्वितीय हैं कि इनके बिना पृथ्वी पर जीवन की कल्पना करना भी संभव नहीं होता है। जल का सबसे विलक्षण गुण इसका विशिष्ट ऊष्मा धारिता (Specific Heat Capacity) होना है, जिसके कारण यह बहुत धीरे-धीरे गर्म और धीरे-धीरे ठंडा होता है। यही कारण है कि समुद्र और बड़े जलाशय पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित रखने में एक विशाल 'थर्मोस्टेट' की तरह कार्य करते हैं।

जलः साधारण दिखने वाला असाधारण चमत्कार

पानी इतना सामान्य है कि हम उसे अक्सर नजर अंदाज कर देते हैं। नल खोला और पानी आ गया–बस बात खत्म। लेकिन ज़रा ठहरकर सोचिए, यही पानी पृथ्वी की सतह का लगभग तीन–चौथाई भाग ढके हुए है, फिर भी पीने योग्य मीठा जल कुल जल का बहुत छोटा हिस्सा है। समुद्रों का अथाह विस्तार हमारी प्यास नहीं बुझा सकता। जीवन जिस जल पर निर्भर है, वह सीमित, नाजुक और दबाव में है।

विज्ञान की दृष्टि से पानी एक साधारण यौगिक–H_2O–लगता है, पर इसके गुण असाधारण हैं। पानी का घनत्व जमने पर कम हो जाता है, इसलिए बर्फ पानी पर तैरती है। यदि ऐसा न होता, तो झीलें और नदियाँ ऊपर से नीचे तक जम जातीं और जलीय जीवन लगभग असंभव हो जाता। पानी की ऊष्मा धारिता (heat capacity) अधिक है, यानी यह धीरे–धीरे गर्म और ठंडा होता है। इसी कारण समुद्र पृथ्वी के तापमान को संतुलित रखते हैं और मौसम चक्र स्थिर बना रहता है। हमारे शरीर का लगभग 60–70 प्रतिशत हिस्सा जल है; रक्त, पसीना, आँसू–सबमें वही जीवनदायी तत्व बहता है।

जल केवल जैविक आवश्यकता नहीं, बल्कि सभ्यता का आधार है। प्राचीन नगर नदियों के किनारे बसे, कृषि वर्षा और सिंचाई पर टिकी, व्यापार जलमार्गों से चला। आज भी उद्योग, ऊर्जा उत्पादन, खाद्य सुरक्षा–सब कुछ जल पर निर्भर है। लेकिन बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण और औद्योगीकरण ने जल स्रोतों पर अभूतपूर्व दबाव डाला है। नदियों में सीवेज और रासायनिक अपशिष्ट, झीलों में प्लास्टिक, और भूजल का अंधाधुंध दोहन–ये सब मिलकर जल संकट को गहरा कर रहे हैं।

जल चक्र (water cycle) प्रकृति की एक अद्भुत व्यवस्था है—वाष्पीकरण, संघनन और वर्षा के माध्यम से पानी निरंतर घूमता रहता है। पर जब हम जंगल काटते हैं, जलाशयों को पाटते हैं और मिट्टी की प्राकृतिक जलधारण क्षमता को नष्ट करते हैं, तो यह चक्र असंतुलित हो जाता है। परिणाम सामने है—कहीं सूखा, कहीं बाढ़। यह प्रकृति का दंड नहीं, बल्कि हमारी अविवेकपूर्ण गतिविधियों का प्रतिफल है।

समाधान किसी एक जादुई तकनीक में नहीं छिपा हैं।वर्षा जल संचयन, पारंपरिक जल संरचनाओं का पुनर्जीवन, अपशिष्ट जल का शोधन, और जल के प्रति व्यवहार में बदलाव—ये सब मिलकर ही असर दिखाते हैं। घरों में छोटे—छोटे कदम—लीकेज ठीक करना, अनावश्यक बहाव रोकना, प्लास्टिक का कम उपयोग—भी बड़े परिवर्तन की नींव बन सकते हैं। विद्यालयों और समुदायों में जल संरक्षण परियोजनाएँ बच्चों में वैज्ञानिक सोच और जिम्मेदारी दोनों विकसित करती हैं।

जल को केवल संसाधन समझना अधूरा दृष्टिकोण है। यह पारिस्थितिकी तंत्र का रक्तसंचार है। जब जल स्वच्छ और संतुलित रहता है, तो जैव विविधता फलती—फूलती है; जब वह प्रदूषित होता है, तो पूरा तंत्र बीमार पड़ जाता है। विज्ञान हमें बताता है कि पृथ्वी पर जीवन की खोज में सबसे पहले पानी की तलाश की जाती है। इसका अर्थ स्पष्ट है—जहाँ जल है, वहीं जीवन की संभावना है।

अब प्रश्न यह नहीं कि पानी कितना सामान्य है; प्रश्न यह है कि हम उसके प्रति कितने सजग हैं। यदि हम जल को "सुविधा" नहीं, "उत्तरदायित्व" मानें, तो भविष्य की दिशा बदल सकती है। पानी को समझना, बचाना और सम्मान देना—यही मानव सभ्यता की स्थिरता की कुंजी है। साधारण दिखने वाला यह तरल दरअसल पृथ्वी का सबसे बड़ा चमत्कार है, और इस चमत्कार की रक्षा करना हमारा साझा दायित्व है।

जल के महत्व की बात करें तो यह केवल प्यास बुझाने का साधन नहीं, बल्कि सभ्यता और अर्थव्यवस्था की धुरी है। कृषि क्षेत्र में सिंचाई से लेकर औद्योगिक इकाइयों में शीतलन (Cooling) और बिजली उत्पादन तक, जल हर जगह अनिवार्य है। पारिस्थितिक तंत्र में जल चक्र के माध्यम से यह नमी और वर्षा का संतुलन बनाए रखता है, जिससे जैव विविधता संरक्षित रहती है। मानवीय दृष्टिकोण से देखें तो हमारा शरीर लगभग 70% जल से बना है, जो उपापचयी क्रियाओं और विषैले पदार्थों के निष्कासन में सहायक होता है। जल के ये विलक्षण वैज्ञानिक गुण ही उसे साधारण से असाधारण बनाते हैं, और इसका संरक्षण ही हमारे भविष्य की सबसे बड़ी सुरक्षा है।

राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (NIH):
(जल संसाधन अनुसंधान एवं नवाचार का वैश्विक केंद्र)

बदलती वैश्विक जलवायु और जल संकट के दौर में जल संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन किसी भी राष्ट्र की नियति तय करता है। भारत में इस उत्तरदायित्व का निर्वहन राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (NIH) द्वारा किया जा रहा है। 1978–79 में स्थापित यह संस्थान भारत सरकार के जल शक्ति मंत्रालय (पूर्व में जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण मंत्रालय) के अंतर्गत एक स्वायत्त सोसाइटी (ऑटोनोमस सोसायटी) के रूप में कार्यरत है। उत्तराखंड के रुड़की शहर में स्थित यह संस्थान जल विज्ञान के क्षेत्र में 'सेंटर ऑफ एक्सीलेंस' (सेंटर ऑफ़ एक्सीलेंस) के रूप में वैश्विक पहचान बना चुका है।

अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्र और विजन

NIH का मुख्य उद्देश्य जल विज्ञान के समस्त वैज्ञानिक पहलुओं पर व्यवस्थित तथा रणनीतिक शोध को बढ़ावा देना, समर्थन करना और समन्वय स्थापित करना है। संस्थान का शोध कार्य केवल अकादमिक न होकर मांग–आधारित (डिमांड – ड्राइवन) और जन–समस्याओं के समाधान पर केंद्रित है।

इसके मुख्य शोध स्तंभ निम्नलिखित हैं:

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव: जल संसाधनों पर ग्लोबल वार्मिंग और बदलती वर्षा पद्धति का विश्लेषण ।

एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन (IWRM): जल के इष्टतम उपयोग के लिए समग्र रणनीतियों का विकास।

भू–जल मॉडलिंग और प्रबंधन: गिरते भू–जल स्तर और जलभृत (एक्वाइफर) की मैपिंग।

आपदा प्रबंधनः बाढ़ और सूखे जैसी चरम स्थितियों (Hydrology of Extremes) का सटीक पूर्वानुमान।
जल गुणवत्ता और पर्यावरणः जलाशयों में गाद जमाव (Sedimentation), प्रदूषण और जल की गुणवत्ता का सूक्ष्म परीक्षण।

संस्थान के विशिष्ट उद्देश्यः
संस्थान की कार्यप्रणाली निम्नलिखित आठ वैज्ञानिक लक्ष्यों पर आधारित हैः
व्यवस्थित शोधः जल विज्ञान और संबंधित विषयों में वैज्ञानिक कार्य करना और उनके परिणामों को वैश्विक मंचों पर प्रकाशित करना।
उन्नत मॉडलिंगः आधुनिक सॉफ्टवेयर और गणितीय मॉडलों के जरिए बाढ़, सूखा, खारापन और प्रदूषण जैसी समस्याओं का समाधान खोजना।
तकनीकी विकासः लागत प्रभावी उपकरण, नवीन पद्धतियां और क्षेत्र–विशिष्ट प्रयोगशाला उपकरणों का निर्माण।

संसाधन आधारः विशेषज्ञों की एक समर्पित टीम, उन्नत प्रयोगशालाओं और समृद्ध पुस्तकालयों का रखरखाव।
तकनीक का प्रसारः उभरती प्रौद्योगिकियों को समाज और संबंधित विभागों तक पहुँचाना।
डिजिटल उपस्थितिः शोध निष्कर्षों के व्यापक प्रसार हेतु अपनी ऑनलाइन उपस्थिति को निरंतर उन्नत करना।
वैश्विक सहयोगः जल विज्ञान के क्षेत्र में सक्रिय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों (जैसे IITs और UNESCO) के साथ साझेदारी करना।
मिशन सिद्धिः जल संसाधनों के संरक्षण और सतत विकास हेतु आवश्यक अन्य सभी सहायक गतिविधियां संचालित करना।
देशव्यापी नेटवर्कः सात दिशाएं, सात समाधान भारत की विविध कृषि–जलवायु परिस्थितियों को समझने के लिए NIH ने अपने क्षेत्रीय केंद्रों का विस्तार किया हैः

मुख्यालयः रुड़की (उत्तराखंड)
क्षेत्रीय केंद्रः बेलगाम (कर्नाटक), जम्मू (J&K), काकीनाडा (आंध्र प्रदेश) और भोपाल (मध्य प्रदेश)।

क्षमता विकास और जन–जागरूकता

NIH केवल एक अनुसंधान केंद्र नहीं है, बल्कि यह मानव संसाधन विकास का एक बड़ा मंच भी है। संस्थान नियमित रूप से वैज्ञानिकों, क्षेत्र–इंजीनियरों, शोधकर्ताओं और गैर–सरकारी संगठनों (NGOs) के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। इसका उद्देश्य समाज में जल संरक्षण के प्रति जागरूकता पैदा करना और जल की एक–एक बूंद के इष्टतम उपयोग को सुनिश्चित करना है।

सिंचाई अनुसंधान संस्थान (आईआरआई) रुड़की, उत्तराखंड।

रुड़की स्थित सिंचाई अनुसंधान संस्थान, हाइड्रोलिक मॉडलिंग, सिविल इंजीनियरिंग, पदार्थ परीक्षण और भूजल अध्ययन के क्षेत्र में अग्रणी संस्थान है। यह उत्तराखंड सरकार का संस्थान है और उत्तराखंड सिंचाई विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण में कार्यरत है। यह संस्थान 'लाभ–रहित हानि' के आधार पर अध्ययन करता है। संस्थान के बहादराबाद स्टेशन पर स्थित हाइड्रोलिक मॉडल सुविधाएं भारत में सर्वश्रेष्ठ में से एक हैं। मॉडल अध्ययन के लिए उपलब्ध जल प्रवाह 8 क्यूमेक तक और जल का ढलान 10 मीटर तक है, इसलिए मॉडल अपेक्षाकृत बड़े होते हैं और बेहतर परिणाम देते हैं।

सामग्री परीक्षण सुविधाओं में मृदा परीक्षण, भार वहन क्षमता पारगम्यता, चट्टान परीक्षण जैसे विरूपण मापांक, खिंचाव, सुरंग परीक्षण, पुल भार परीक्षण, सीमेंट समुच्चय, ईंट और इस्पात की गुणवत्ता का परीक्षण, कंक्रीट मिश्रण डिजाइन आदि शामिल हैं।

यह संस्थान भूजल संबंधी अध्ययनों में भी संलग्न है, जैसे कि उपसतही जल का संयुक्त उपयोग और जल जमाव, नहरों की परत बिछाने की उपयुक्तता, नहरों से रिसाव, ट्यूबवेल के लिए जलभृत का डिजाइन और उपयुक्तता, बारहमासी नदियों से जल के पुनर्जनन / रिसाव और कृत्रिम भूजल पुनर्भरण आदि के लिए अध्ययन।

रुड़की स्थित आईआरआई का संक्षिप्त इतिहास और गौरवः

उत्तर प्रदेश सिंचाई विभाग के तत्वावधान में अनुसंधान एवं विकास कार्य करने के लिए सिंचाई अनुसंधान संस्थान (आईआरआई) की स्थापना वर्ष 1928 में लखनऊ में एक छोटी अनुसंधान इकाई के रूप में की गई थी।

इस छोटी इकाई की सफलता को उचित मान्यता मिली और 1945 में गतिविधियों का विस्तार किया गया। विस्तारित इकाई को 1946 में बहादराबाद (रुड़की) में स्थानांतरित कर दिया गया, जहाँ जल संरचनाओं के भौतिक मॉडलिंग के लिए प्रचुर मात्रा में सुविधाएं उपलब्ध थीं।

रुड़की स्थित अनुसंधान इकाई 1954 में एक पूर्ण विकसित संस्थान बन गई। यह संस्थान धीरे–धीरे एक अग्रणी अनुसंधान केंद्र के रूप में विकसित हुआ और अब भारत में कई जल विद्युत और जल संसाधन परियोजनाओं के लिए अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों में संलग्न है। आईआरआई बीआईएस, सीबीआई एंड पी, आईआरसी और एमओएस की कई राष्ट्रीय तकनीकी समितियों में सलाहकार के रूप में प्रतिनिधित्व करता है।

संस्थान अपने अनुसंधान कार्यों के लिए जल संसाधन विकास परिषद (डब्ल्यूआरडीसी), बीआईएस, मानक भवन, नई दिल्ली की कई तकनीकी समितियों, सिविल इंजीनियरिंग विभाग, जल संसाधन विकास एवं प्रबंधन विभाग (डब्ल्यूआरडी एंड एम) और वैकल्पिक जल ऊर्जा केंद्र (एएचईसी), भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, केंद्रीय सिंचाई एवं विद्युत बोर्ड, नई दिल्ली, राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रुड़की, केंद्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रुड़की, राज्य अभियंता अकादमी, कालागढ़ आदि के साथ घनिष्ठ संपर्क बनाए रखता है।

भारत में जल संसाधन प्रबंधन नीति, अनुसंधान और प्रमुख संस्थान

भारत में जल संसाधन प्रबंधन एक बहुआयामी विषय है। बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण और जलवायु परिवर्तन के दौर में जल सुरक्षा सुनिश्चित करना राष्ट्र की प्राथमिकता है। इसके लिए जल शक्ति मंत्रालय के नेतृत्व में एक सशक्त संस्थागत ढांचा कार्य कर रहा है, जो अनुसंधान (Research) से लेकर नीति निर्धारण (Policy Making) तक की जिम्मेदारी निभाता है।

1. केंद्रीय नियामक और नीति निर्धारक निकाय

भारत में जल संसाधनों के विकास, प्रबंधन और संरक्षण के लिए सर्वोच्च निकाय जल शक्ति मंत्रालय है। इसके अंतर्गत प्रमुख तकनीकी और प्रशासनिक संगठन कार्य करते हैं:

केंद्रीय जल आयोग (CWC), नई दिल्ली: यह देश का शीर्ष तकनीकी संगठन है। यह मुख्य रूप से सतही जल (Surface Water) के प्रबंधन, बाढ़ पूर्वानुमान (Flood Forecasting), सिंचाई परियोजनाओं के नियोजन और अंतर–राज्यीय नदी विवादों के तकनीकी समाधान के लिए जिम्मेदार है।

केंद्रीय भूमि जल बोर्ड (CGWB), फरीदाबाद: जहाँ CWC सतही जल देखता है, वहीं CGWB देश में भूजल (Ground water) के सर्वेक्षण, मूल्यांकन और प्रबंधन के लिए मुख्य संस्था है। यह गिरते भूजल स्तर को रोकने के लिए नीतियां बनाता है।

2. प्रमुख अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान (R&D):

संस्थान का नाम	स्थान	मुख्य विशेषज्ञता / कार्य
राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान (NIH)	रुड़की	जल विज्ञान (Hydrology) के क्षेत्र में बुनियादी और अनुप्रयुक्त वैज्ञानिक अनुसंधान।
केंद्रीय जल एवं विद्युत अनुसंधान केंद्र (CWPRS)	पुणे	जल और ऊर्जा क्षेत्र में हाइड्रोलिक मॉडलिंग और तकनीकी परीक्षण।
भारतीय जल प्रबंधन संस्थान (ICAR&IIWM)	भुवनेश्वर	कृषि क्षेत्र में जल के कुशल उपयोग और 'पर ड्रॉप मोर क्रॉप' तकनीक पर कार्य।
केंद्रीय मृदा और जल संरक्षण संस्थान (IISWC)	देहरादून	भूमि क्षरण रोकने और पहाड़ी क्षेत्रों में जल संरक्षण तकनीकों का विकास।
केंद्रीय मृदा एवं सामग्री अनुसंधान केंद्र (CSMRS)	नई दिल्ली	जल परियोजनाओं के लिए सामग्री, चट्टान और मृदा यांत्रिकी का परीक्षण।

तकनीकी नवाचार और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के बिना आधुनिक जल प्रबंधन असंभव है। इसमें निम्नलिखित संस्थानों की भूमिका अहम है:

3. क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण:
नीतियों को जमीन पर उतारने के लिए कुशल पेशेवरों की आवश्यकता होती है:

राष्ट्रीय जल अकादमी (NWA), पुणे: यह जल संसाधन क्षेत्र के इंजीनियरों और अधिकारियों के लिए एक 'सेंटर ऑफ एक्सीलेंस' है, जहाँ उन्हें आधुनिक प्रबंधन और प्रशासन का प्रशिक्षण दिया जाता है।

4. राज्य और स्थानीय स्तर का प्रबंधन:

भारत के संविधान में 'जल' मुख्य रूप से राज्य का विषय है, इसलिए कार्यान्वयन की वास्तविक जिम्मेदारी राज्यों पर होती है:

राज्य जल संसाधन विभाग: जैसे उत्तराखंड जल संस्थान (UJS), जो राज्य की भौगोलिक चुनौतियों के अनुसार पेयजल और स्वच्छता का प्रबंधन करते हैं।

पंचायती राज संस्थाएं: जमीनी स्तर पर जल संचयन, तालाबों के पुनरुद्धार और सामुदायिक जल प्रबंधन की जिम्मेदारी संभालती हैं।

एक एकीकृत दृष्टिकोण की ओर:

भारत का जल प्रबंधन मॉडल अब 'एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन' (IWRM) की ओर बढ़ रहा है। इसमें सतही जल और भूजल को अलग–अलग देखने के बजाय एक इकाई माना जाता है। इनका उद्देश्य देश में पानी की समान उपलब्धता, बाढ़ व सूखे का प्रभावी नियंत्रण और भविष्य की पीढ़ियों के लिए जल का सतत उपयोग सुनिश्चित करना।

एक महत्वपूर्ण स्पष्टीकरण: NIH बनाम IRI
रुड़की में जल अनुसंधान के दो प्रमुख संस्थान हैं, जिनके बीच का अंतर समझना आवश्यक है:

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान (NIH): यह भारत सरकार का संस्थान है जो व्यापक जल–वैज्ञानिक अनुसंधान, मॉडलिंग और नीति–निर्धारण पर केंद्रित है।

सिंचाई अनुसंधान संस्थान (IRI): यह उत्तराखंड सरकार के अधीन है, जो मुख्य रूप से हाइड्रोलिक मॉडलिंग, सिविल इंजीनियरिंग परीक्षणों और सिंचाई परियोजनाओं के भौतिक स्वरूपों पर कार्य करता है।

राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रुड़की अपनी अत्याधुनिक प्रयोगशालाओं, रिमोट सेंसिंग एवं जीआईएस जैसी उन्नत तकनीकों और वैश्विक साझेदारियों के माध्यम से भारत को 'जल–सुरक्षित' राष्ट्र बनाने की दिशा में निरंतर अग्रसर है। इसका हर शोध पत्र और हर तकनीकी नवाचार देश की नदियों, हिमनदों और भू–जल के संरक्षण की एक वैज्ञानिक प्रतिबद्धता है।

ग्लेशियर दिवस 2026:
(पिघलते अस्तित्व को बचाने की पुकार)

21 मार्च 2026 को दुनिया भर में 'ग्लेशियर संरक्षण दिवस' मनाया जा रहा है। यह दिन महज़ एक औपचारिकता नहीं, बल्कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण तेज़ी से लुप्त हो रहे 'सफेद सोने' (ग्लेशियरों) को बचाने की एक वैश्विक चेतावनी है।

1. 2026 में ग्लेशियरों की स्थिति: एक गंभीर चुनौती वैज्ञानिक अध्ययनों और राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान (NIH) की हालिया रिपोर्ट्स के अनुसार, हिंदूकुश–हिमालय क्षेत्र में ग्लेशियरों के पिघलने की दर पिछले दशक की तुलना में बढ़ी है।

ब्लैक कार्बन का प्रभाव: हिमालयी क्षेत्रों में बढ़ते प्रदूषण और ब्लैक कार्बन के जमाव के कारण ग्लेशियरों की सतह काली पड़ रही है, जिससे वे सूर्य की गर्मी को अधिक सोख रहे हैं।

GLOF (ग्लेशियर लेक आउटबर्स्ट फ्लड): ग्लेशियरों के पिघलने से नई झीलें बन रही हैं, जिनसे अचानक बाढ़ आने का खतरा बढ़ गया है (जैसे सिक्किम और उत्तराखंड की घटनाएं)।

2. भारत के प्रमुख जल संस्थानों की भूमिका:

भारत में जल प्रबंधन से जुड़े संस्थान 2026 में ग्लेशियरों की निगरानी के लिए नई तकनीकों का उपयोग कर रहे हैं:

CWC और NIH: ये संस्थान 'रिमोट सेंसिंग' और 'सैटेलाइट इमेजरी' के जरिए हिमालयी ग्लेशियरों की वास्तविक समय (Real & time) में निगरानी कर रहे हैं।

भविष्यवाणी मॉडल: ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों (गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु) के जलस्तर में होने

वाले बदलावों को मापने के लिए उन्नत गणितीय मॉडल विकसित किए गए हैं।

3. ग्लेशियर क्यों महत्वपूर्ण हैं?

ग्लेशियरों को 'दुनिया का वाटर टावर' कहा जाता है।

नदियों का स्रोत: उत्तर भारत की सभी बारहमासी नदियाँ ग्लेशियरों से निकलती हैं।

ऊर्जा सुरक्षा: हमारी जलविद्युत परियोजनाएं (Hydroelectric Projects) इन्हीं नदियों पर आधारित हैं।

पारिस्थितिकी संतुलन: ये वैश्विक तापमान को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

4. 2026 की थीम और उद्देश्य: 'बचेंगे ग्लेशियर, बचेगा जीवन'

इस वर्ष का मुख्य ध्यान 'ग्लेशियर अनुकूलन' (Glacier Adaptation) पर है। इसके तहत निम्न लिखित कदम उठाए जा रहे हैं:

स्थानीय समुदायों की सुरक्षा: ग्लेशियर के पास रहने वाले लोगों को GLOF जैसी आपदाओं के प्रति सचेत करना।

कार्बन उत्सर्जन में कमी: पेरिस समझौते के लक्ष्यों को तेज़ी से पूरा करना ताकि तापमान वृद्धि को 1.5 C तक सीमित रखा जा सके।

कृत्रिम ग्लेशियर (Ice Stupas): लद्दाख जैसे क्षेत्रों में सोनम वांगचुक द्वारा विकसित 'आइस स्तूपा' जैसी तकनीकों को बढ़ावा देना ताकि गर्मियों में पानी की कमी न हो।

ग्लेशियर दिवस 2026 हमें याद दिलाता है कि यदि हमने आज अपनी जीवनशैली और विकास के मॉडल में बदलाव नहीं किया, तो आने वाली पीढ़ियों के लिए नदियाँ केवल किताबों में रह जाएंगी। हिमालय के ग्लेशियरों का संरक्षण केवल पर्यावरण का मुद्दा नहीं, बल्कि भारत की खाद्य और जल सुरक्षा का आधार है।

'ग्लेशियर केवल बर्फ के पहाड़ नहीं हैं, वे हमारी नदियों की धड़कन और भविष्य की प्यास बुझाने का एकमात्र जरिया हैं।'

गंगोत्री ग्लेशियरः
भारत की जीवनरेखा पर मंडराता संकट (रिपोर्ट 2026)

गंगोत्री ग्लेशियर उत्तराखंड के उत्तरकाशी जिले में स्थित है। इसकी लंबाई लगभग 30 किलोमीटर और चौड़ाई 2 से 4 किलोमीटर के बीच है। पिछले कुछ दशकों में, यह ग्लेशियर वैज्ञानिकों के लिए 'क्लाइमेट चेंज' का सबसे बड़ा इंडिकेटर बन गया है।

1. पीछे खिसकने की दर (Recession Rate):

विभिन्न संस्थानों जैसे NIH (रुड़की) और ISRO के सैटेलाइट डेटा के अनुसार, गंगोत्री ग्लेशियर पिछले 70–80 वर्षों में तेजी से पीछे खिसका है।

ऐतिहासिक डेटाः 1935 से 1996 के बीच यह लगभग 19 मीटर प्रति वर्ष की दर से पीछे खिसक रहा था।

वर्तमान स्थिति (2026): हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि यह दर अब स्थिर नहीं है। ग्लेशियर का 'थूथन' (Muzzle) जिसे 'गौमुख' कहा जाता है, अपनी मूल स्थिति से काफी पीछे जा चुका है।

2. पिघलने के प्रमुख कारणः

गंगोत्री ग्लेशियर के तेजी से पिघलने के पीछे तीन मुख्य कारक जिम्मेदार हैंः

ग्लोबल वार्मिंगः हिमालयी क्षेत्र में औसत तापमान में वृद्धि वैश्विक औसत से अधिक देखी गई है।

ब्लैक कार्बनः वाहनों के धुएं, पराली जलने और जंगलों की आग से निकलने वाला काला कार्बन बर्फ पर जम जाता है, जिससे सूर्य की किरणों का परावर्तन (Albedo Effect) कम हो जाता है और बर्फ तेजी से पिघलती है।

कम बर्फबारीः सर्दियों के दौरान होने वाली बर्फबारी की मात्रा और अवधि में कमी आने से ग्लेशियर को 'रिचार्ज' होने का समय नहीं मिल पा रहा है।

3. पारिस्थितिक और आर्थिक प्रभावः

गंगोत्री का अस्तित्व केवल भूगोल तक सीमित नहीं हैः

जल संकटः यदि पिघलने की दर यही रही, तो भविष्य में गंगा बेसिन की नदियों में मानसून के बाद जलस्तर काफी गिर सकता है।

जलविद्युत परियोजनाएंः भागीरथी और गंगा पर बनी टिहरी जैसी बड़ी पनबिजली परियोजनाओं की कार्यक्षमता सीधे तौर पर इस ग्लेशियर के स्वास्थ्य पर निर्भर है।

बाढ़ का खतराः ग्लेशियर के अंदर बनने वाली अस्थाई झीलें (Supra & glacial lakes) फटने से नीचे के इलाकों में अचानक बाढ़ (Flash Floods) ला सकती हैं।

4. संरक्षण के प्रयास (2026 तक की प्रगति):

भारत सरकार ने 'राष्ट्रीय हिमालयी मिशन' के तहत कई कदम उठाए हैंः

निगरानी केंद्रः गौमुख और भोजबासा के पास स्वचालित मौसम केंद्र (AWS) स्थापित किए गए हैं जो हर घंटे डेटा CWC और NIH को भेजते हैं।

टूरिज्म रेगुलेशनः गंगोत्री नेशनल पार्क के संवेदनशील इलाकों में पर्यटकों की संख्या को कड़ाई से सीमित किया गया है ताकि मानवीय गतिविधियों से होने वाले प्रदूषण को कम किया जा सके।

वृक्षारोपणः ऊपरी हिमालयी क्षेत्रों में उच्च ऊंचाई वाले पौधों का रोपण किया जा रहा है ताकि मिट्टी के कटाव को रोका जा सके।

गंगोत्री ग्लेशियर केवल बर्फ का एक टुकड़ा नहीं, बल्कि उत्तर भारत की खाद्य सुरक्षा का आधार है। 2026 में हमारा प्राथमिक लक्ष्य इसे पिघलने से रोकना नहीं (क्योंकि यह एक वैश्विक प्रक्रिया है), बल्कि इसके पिघलने की दर को धीमा करना और इसके प्रभावों के प्रति अनुकूलन (Adaptation) तैयार करना है।

गंगोत्री ग्लेशियरः
(हिमालय का 'सफेद विशालकाय' जो हमारी धड़कनें चलाता है।)

कल्पना कीजिए एक ऐसी 'कुदरती फ्रिज़' की जो 30 किलोमीटर लंबी है और जिसके भीतर अरबों लीटर पानी बर्फ के रूप में जमा है। यह गंगोत्री ग्लेशियर है—भारत का सबसे बड़ा और सबसे महत्वपूर्ण ग्लेशियर। लेकिन 2026 की तपिश में यह विशालकाय बर्फ का दरिया अपनी जगह से पीछे हट रहा है।

आइए जानते हैं कि इसका हमारे जीवन से क्या नाता है और यह रोचक क्यों है:

1. 'गौमुख' — ग्लेशियर का बदलता चेहराः

गंगोत्री ग्लेशियर का वह हिस्सा जहाँ से भागीरथी नदी निकलती है, उसे हम 'गौमुख' कहते हैं। पुराने समय में यह बिल्कुल गाय के मुख जैसा दिखता था।

रोचक तथ्यः आज वैज्ञानिकों के लिए गौमुख एक 'मूविंग टारगेट' बन गया है। यह हर साल लगभग 15 से 20 मीटर पीछे खिसक रहा है। यानी आज आप जहाँ खड़े होकर गौमुख देख रहे हैं, कुछ दशकों पहले वह जगह ग्लेशियर के बीचों—बीच रही होगी।

2. 'सफेद सोना' जो काला पड़ रहा हैः ग्लेशियर की सबसे बड़ी ताकत उसकी सफेदी (Albedo) है, जो सूरज की रोशनी को वापस अंतरिक्ष में भेज देती है।

समस्याः प्रदूषण के कारण हवा में तैरता 'ब्लैक कार्बन' (काली राख और धुआँ) गंगोत्री ग्लेशियर पर जम रहा है।

परिणामः जैसे काले कपड़ों में ज्यादा गर्मी लगती है, वैसे ही यह 'काला पड़ा' ग्लेशियर सूरज की गर्मी को सोख रहा है और तेजी से पिघल रहा है। यह हमारे लिए एक चेतावनी है—हवा जितनी साफ होगी, हमारा ग्लेशियर उतना ही सुरक्षित रहेगा।

3. भविष्य का 'वाटर टावर' या 'टाइम बम'?

गंगोत्री ग्लेशियर उत्तर भारत के लिए एक 'वाटर टावर' की तरह है। लेकिन इसके पिघलने से नई चुनौतियाँ पैदा हो रही हैं:

ग्लेशियर झीलें: पिघलती बर्फ पहाड़ों के बीच छोटी—छोटी झीलें बना रही है। अगर ये अचानक फूटती हैं, तो नीचे बसे गांवों के लिए 'फ्लैश फ्लड' का खतरा बन जाती हैं।

समाधानः अब राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान (NIH) इन झिलों की निगरानी सैटेलाइट से वैसे ही करता है जैसे हम मैप्स पर ट्रैफिक देखते हैं।

4. हमारे घर की रसोई पर इसका 'डायरेक्ट कनेक्शन'

अगर आप दिल्ली या बनारस में बैठकर पानी पी रहे हैं या रोटी खा रहे हैं, तो उसमें गंगोत्री ग्लेशियर का 'योगदान' शामिल है:

सस्ती बिजली: उत्तराखंड के बांधों से बनने वाली 'ग्रीन एनर्जी' इसी ग्लेशियर के पानी से आती है। अगर ग्लेशियर कम हुआ, तो बिजली महंगी होगी।

अनाज का भंडार: पंजाब, हरियाणा और यूपी के खेतों की सिंचाई गंगा की नहरों से होती है। गंगोत्री ग्लेशियर का स्वस्थ रहना मतलब हमारी थाली का सस्ता रहना।

5. हम क्या कर सकते हैं? (रोचक और आसान कदम)

हमें पहाड़ों पर जाकर बर्फ जमा करने की जरूरत नहीं है, हम शहर में रहकर भी गंगोत्री ग्लेशियर की मदद कर सकते हैं:

'प्लास्टिक–मुक्त' यात्रा: जब भी पहाड़ों पर जाएं, अपना कचरा साथ लाएं। कचरा जलने से निकलने वाली गर्मी ग्लेशियर की दुश्मन है।

पानी की 'एफडी' (Fixed Deposit): बारिश के पानी को सहेजें (Rainwater Harvesting)। जितना हम भूजल बचाएंगे, उतना ही हम नदियों पर अपनी निर्भरता कम करेंगे।

पर्यावरण मित्र जीवन: बिजली बचाना और पेड़ों को लगाना सीधे तौर पर ग्लोबल वार्मिंग को कम करता है, जिससे गंगोत्री ग्लेशियर को 'ठंडक' मिलती है।

गंगोत्री ग्लेशियर केवल भूगोल का हिस्सा नहीं है, यह हमारी संस्कृति और उत्तरजीविता (Survival) का आधार है। 2026 में हमारा संकल्प यह होना चाहिए कि हम इस 'सफेद विशालकाय' को केवल यादों और तस्वीरों में न सिमटने दें, बल्कि अपनी जीवन शैली बदलकर इसे सुरक्षित रखें।

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान (WIHG):

यह देहरादून स्थित एक प्रमुख राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान है, जो हिमालय की उत्पत्ति, संरचना, भूकंप, ग्लेशियर और प्राकृतिक आपदाओं का अध्ययन करता है। यह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (DST), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अंतर्गत एक स्वायत्त (Autonomous) संस्थान है।

स्थापना और विकासः इसकी स्थापना जून 1968 में दिल्ली विश्वविद्यालय के भूविज्ञान विभाग में एक छोटे केंद्र के रूप में हुई।

अप्रैल 1976 में इसे देहरादून स्थानांतरित किया गया ताकि हिमालयी क्षेत्रों के निकट रहकर शोध कार्य किया जा सके।

प्रारंभ में इसका नाम इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी था।

बाद में महान भूवैज्ञानिक प्रो. डी. एन. वाडिया (F.R.S., नेशनल प्रोफेसर) के सम्मान में इसका नाम वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान रखा गया।

आज यह संस्थान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित "राष्ट्रीय प्रयोगशाला" (National Laboratory) के रूप में जाना जाता है।

संस्थान क्या करता है? (सरल भाषा में)

हिमालय केवल पहाड़ नहीं है, बल्कि यह एक "जीवित पर्वत श्रृंखला" है, जो आज भी भूगर्भीय रूप से सक्रिय है। वाडिया संस्थान का काम हैः

- हिमालय कैसे बना और अब कैसे बदल रहा है, यह समझना
- भूकंप और भूस्खलन क्यों आते हैं, इसका वैज्ञानिक अध्ययन
- ग्लेशियर कितनी तेजी से पिघल रहे हैं, इसका रिकॉर्ड रखना
- प्राकृतिक संसाधनों (जल, खनिज, पत्थर आदि) का सुरक्षित उपयोग बताना

प्रमुख शोध क्षेत्र (ThrustAreas)

संस्थान शुरू में उन दुर्गम क्षेत्रों में गया जहाँ भूगर्भीय जानकारी बहुत कम थी—जैसे अरुणाचल हिमालय, कुमाऊँ का उच्च हिमालय, लाहौल—स्पीति और लद्दाख।

अब यह राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय महत्त्व के विशेष विषयों पर काम कर रहा हैः

1. हिमट्रांसेक्ट्स (Himtransects)

हिमालय के आर—पार वैज्ञानिक सर्वेक्षण करके उसकी अंदरूनी संरचना को समझना।

2. जलवायु और टेक्टोनिक संबंध:
मौसम में बदलाव (Climate Change) और पहाड़ों की हलचल (Tectonics) एक–दूसरे को कैसे प्रभावित करते हैं।

3. जैव–विविधता और पुराजीव अध्ययन:
करोड़ों वर्ष पहले हिमालय में कौन से जीव थे और पर्यावरण कैसा था।

4. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण:
खनिज, औद्योगिक सामग्री, ग्लेशियर और जल संसाधनों के प्रबंधन की रणनीति बनाना।

5. समाज के लिए रियल–टाइम भूविज्ञान:
भूकंप, भूस्खलन और बाढ़ जैसी आपदाओं के कारणों को समझना, खतरे का आकलन करना और बचाव के उपाय सुझाना।

संस्थान के मुख्य उद्देश्य:
हिमालय और आसपास के क्षेत्रों के सतत विकास के लिए राष्ट्रीय केंद्र के रूप में कार्य करना।

- भूविज्ञान में नवीन सिद्धांत और मॉडल विकसित करना।
- अत्याधुनिक प्रयोगशालाएँ और वेधशालाएँ स्थापित करना।
- प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम का आकलन कर समाधान सुझाना।
- हिमालय की भूगर्भीय जानकारी का राष्ट्रीय डेटाबेस तैयार करना।
- देश–विदेश के विश्वविद्यालयों और संस्थानों के साथ वैज्ञानिक सहयोग बढ़ाना।
- समाज और सरकार को विशेषज्ञ परामर्श देना।

आम जनता के लिए इसका महत्व
वाडिया संस्थान का शोध केवल किताबों तक सीमित नहीं है। इसका सीधा लाभ समाज को मिलता है:

- भूकंपरोधी निर्माण की सलाह
- पहाड़ी क्षेत्रों में सुरक्षित सड़क निर्माण के सुझाव
- ग्लेशियर पिघलने के आंकड़ों के आधार पर जल नीति तैयार करना
- आपदा पूर्व चेतावनी प्रणाली को मजबूत बनाना

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान हिमालय का "वैज्ञानिक प्रहरी" है।
यह न केवल पहाड़ों के रहस्यों को समझता है, बल्कि विज्ञान के माध्यम से लोगों की सुरक्षा और सतत विकास का मार्ग भी दिखाता है।

हिमालय की सुरक्षा की नई पहलः ग्लेशियर झीलों की निगरानी में वाडिया संस्थान की भूमिका

उत्तराखंड के हिमालयी क्षेत्र में लगभग 968 ग्लेशियर और करीब 1200 ग्लेशियर झीलें मौजूद हैं। इनमें से 5 झीलों को अत्यधिक संवेदनशील श्रेणी में रखा गया है। इन झीलों के अचानक फटने की स्थिति में नीचे के गांवों और नदी घाटियों में गंभीर बाढ़ का खतरा उत्पन्न हो सकता है। इसी चुनौती को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकार ने देहरादून स्थित Wadia Institute of Himalayan Geology (वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान) को ग्लेशियर झीलों की निगरानी के लिए नोडल विभाग नियुक्त किया है।

साल 2024 में National Disaster Management Authority (राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण) ने हिमालयी राज्यों की ग्लेशियर झीलों पर एक विस्तृत अध्ययन रिपोर्ट जारी की थी। इस रिपोर्ट में उत्तराखंड की 13 झीलों को संवेदनशील और अति संवेदनशील बताया गया था। इसके बाद राज्य आपदा प्रबंधन विभाग ने वैज्ञानिक निगरानी को प्राथमिकता दी।

अब वाडिया संस्थान विशेषज्ञों की टीम के साथ मिलकर इन झीलों का नियमित वैज्ञानिक अध्ययन करेगा। झीलों के जलस्तर, तापमान, बर्फ की स्थिति और आसपास की चट्टानों की स्थिरता की जांच की जाएगी। आधुनिक उपकरणों और फील्ड सर्वेक्षण के माध्यम से संभावित खतरे का आकलन किया जाएगा। यदि किसी झील में असामान्य बदलाव दिखाई देता है, तो समय रहते चेतावनी जारी की जा सकेगी।

यह पहल केवल शोध कार्य नहीं, बल्कि जनसुरक्षा से जुड़ा महत्वपूर्ण कदम है। वैज्ञानिक निगरानी से आपदा जोखिम कम करने, योजनाबद्ध विकास करने और हिमालयी क्षेत्रों में सुरक्षित जीवन सुनिश्चित करने में सहायता मिलेगी। विज्ञान आधारित यह निर्णय उत्तराखंड में आपदा प्रबंधन को और अधिक सशक्त बनाने की दिशा में एक ठोस कदम माना जा रहा है।

ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (GLOF):

वैश्विक संकट और उत्तराखंड:

GLOF एक ऐसी विनाशकारी बाढ़ है जो ग्लेशियरों के पिघलने से बनी झीलों के प्राकृतिक बांध (Moraine) टूटने से आती है। जलवायु परिवर्तन के कारण दुनिया भर में यह खतरा 'टाइम बम' की तरह गहरा रहा है।

वैश्विक और भारतीय स्थिति:

अत्यधिक जोखिम: वैश्विक स्तर पर 1.5 करोड़ लोग GLOF के खतरे में हैं, जिनमें से 62 प्रतिशत उच्च एशियाई पर्वतीय क्षेत्रों (HMA) में रहते हैं।

भारत का स्थान: भारत, पाकिस्तान, चीन और पेरू दुनिया के सबसे संवेदनशील देश हैं। भारत के 6 हिमालयी राज्य (विशेषकर उत्तराखंड, लद्दाख और सिक्किम) इसकी सीधी जद में हैं।

डेटा: 2009 के बाद से हिमालयी झीलों के जल प्रसार क्षेत्र में 40: की वृद्धि हुई है।

उत्तराखंड का परिप्रेक्ष्य:

उत्तराखंड अपनी तीव्र ढलान और ग्लेशियरों की अधिकता के कारण अत्यधिक संवेदनशील है।

प्रमुख घटनाएं: 2013 की केदारनाथ त्रासदी (चोराबाड़ी झील) और 2021 की चमोली आपदा (ऋषिगंगा/धौलीगंगा) GLOF के खतरों के साक्षात प्रमाण हैं।

संवेदनशील जिले: चमोली, उत्तरकाशी, पिथौरागढ़ और रुद्रप्रयाग में कई ऐसी झीलें हैं जिनकी निगरानी 'इसरो' (ISRO) द्वारा की जा रही है।

आपदा प्रबंधन के लिए NDMA के मुख्य दिशा–निर्देश:

NDMA ने इस जोखिम को कम करने के लिए निम्नलिखित रणनीतियाँ सुझाई हैं:

तकनीकी निगरानी: 'सिंथेटिक–एपर्चर रडार' (SAR) तकनीक का उपयोग करके नई झीलों और जलस्तर में बदलाव का पता लगाना।

इंजीनियरिंग समाधान: झीलों से पानी को नियंत्रित तरीके से बाहर निकालने के लिए पंपिंग, साइफनिंग या सुरंग बनाना।

प्रारंभिक चेतावनी (EWS): नदियों पर सेंसर–आधारित अलार्म सिस्टम लगाना ताकि आबादी को समय रहते सूचित किया जा सके।

स्थानीय प्रशिक्षण: चूंकि 80 प्रतिशत राहत कार्य स्थानीय लोग करते हैं, इसलिए समुदाय को आपदा प्रबंधन हेतु प्रशिक्षित करना।

निर्माण नियंत्रण: पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील क्षेत्रों में भारी निर्माण और खुदाई के लिए सख्त नियम (Uniform Codes) लागू करना।

ग्लोबल वार्मिंग के इस दौर में GLOF एक स्थायी खतरा है। उत्तराखंड जैसे राज्यों के लिए विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाना अनिवार्य है। प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियों और सामुदायिक जागरूकता के माध्यम से ही जान–माल के नुकसान को कम किया जा सकता है।

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में जल–प्रलय संबंधी आपदाएँ: कारण, प्रभाव और समाधान

उत्तराखंड हिमालय की गोद में बसा वह प्रदेश है जहाँ से गंगा, यमुना, अलकनंदा और मंदाकिनी जैसी नदियाँ निकलती हैं। यही नदियाँ जीवन का आधार भी हैं और जब अनियंत्रित हो जाती हैं तो विनाश का कारण भी बनती हैं। पिछले कुछ वर्षों में राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में जल–प्रलय अर्थात् बाढ़, बादल फटना, अतिवृष्टि और ग्लेशियर झील विस्फोट जैसी घटनाओं में तेजी आई है। इन घटनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हिमालयी पारिस्थितिकी अत्यंत संवेदनशील है और थोड़ी–सी असंतुलित गतिविधि भी बड़े जल–विनाश का रूप ले सकती है।

जल–प्रलय की प्रमुख घटनाएँ:

बादल फटना (Cloudburst):

पर्वतीय क्षेत्रों में कम समय में अत्यधिक वर्षा को बादल फटना कहा जाता है। कुछ ही घंटों में महीनों जितना पानी गिरने से पहाड़ों की ढलानें टूट जाती हैं और नदियाँ उफान पर आ जाती हैं। वर्ष 2013 में केदारनाथ क्षेत्र में आई भीषण आपदा इसका उदाहरण है, जहाँ अत्यधिक वर्षा और अचानक आई बाढ़ ने भारी तबाही मचाई।

अचानक बाढ़ (Flash Flood):

जब तीव्र वर्षा या ऊपरी क्षेत्रों में हिमनद पिघलने से अचानक जलप्रवाह बढ़ जाता है, तो निचले क्षेत्रों में अचानक बाढ़ आती है। यह बाढ़ मलबे, पत्थरों और पेड़ों को साथ लेकर चलती है, जिससे विनाश और बढ़ जाता है।

ग्लेशियर झील विस्फोट (GLOF):

जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं। उनके पास बनने वाली झीलें यदि अचानक फट जाएँ तो अत्यंत विनाशकारी बाढ़ उत्पन्न होती है। वर्ष 2021 में चमोली जिले में हुई घटना ने इस खतरे की गंभीरता को उजागर किया।

नदी तटीय कटाव और अति प्रवाह:

लगातार वर्षा और अनियोजित निर्माण के कारण नदियों का प्राकृतिक मार्ग अवरुद्ध होता है। जब जलस्तर बढ़ता है तो नदी अपने किनारे तोड़कर बस्तियों में प्रवेश कर जाती है।

जल–प्रलय के प्रमुख कारण

1. जलवायु परिवर्तन:

वर्षा का पैटर्न बदल गया है। अब वर्षा कम दिनों में, लेकिन अत्यधिक मात्रा में होती है। इससे जल धाराएँ अचानक उग्र रूप ले लेती हैं।

2. वनों की कटाई:

पेड़ों की कमी से वर्षा का पानी सीधे ढलानों से बहकर नदियों में पहुँचता है, जिससे बाढ़ की तीव्रता बढ़ती है।

3. अनियोजित निर्माण:

नदी तटों और जलग्रहण क्षेत्रों में होटल, सड़कें और भवन बनाए जा रहे हैं। इससे नदियों का प्राकृतिक बहाव बाधित होता है।

4. जलग्रहण क्षेत्रों का क्षरण:

खनन, पहाड़ों की कटाई और ढलानों की खुदाई से मिट्टी ढीली हो जाती है, जो वर्षा के साथ बहकर मलबा प्रवाह का कारण बनती है।

5. बढ़ता पर्यटन दबाव:

धार्मिक स्थलों पर अत्यधिक भीड़ और संसाधनों का दबाव प्राकृतिक संतुलन को प्रभावित करता है।

प्रभाव:

जल–प्रलय की घटनाएँ केवल तात्कालिक क्षति तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ती हैं–

- हजारों लोगों की जान और संपत्ति का नुकसान
- सड़कें, पुल और विद्युत परियोजनाएँ नष्ट
- कृषि भूमि पर मलबा भर जाना
- पेयजल स्रोतों का प्रदूषित होना
- पर्यटन उद्योग को भारी नुकसान
- ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन में वृद्धि

सामाजिक और मानसिक स्तर पर भी इन आपदाओं का गहरा असर पड़ता है। परिवार उजड़ जाते हैं और वर्षों की मेहनत एक पल में समाप्त हो जाती है।

समाधान की दिशा

1. वैज्ञानिक जल प्रबंधन:

नदियों के प्राकृतिक प्रवाह क्षेत्र को सुरक्षित रखा जाए। जलग्रहण क्षेत्रों का संरक्षण किया जाए।

2. वनीकरण और ढलान स्थिरीकरण:

स्थानीय प्रजातियों के वृक्षारोपण से मिट्टी को मजबूती मिलती है और वर्षा का जल अवशोषित होता है।

3. निर्माण पर नियंत्रण:
नदी तटों पर अतिक्रमण रोका जाए और पर्यावरणीय प्रभाव आकलन को अनिवार्य बनाया जाए।

4. पूर्व चेतावनी प्रणाली:
मौसम पूर्वानुमान और जलस्तर मापन प्रणाली को मजबूत किया जाए, ताकि समय रहते लोगों को सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाया जा सके।

5. सामुदायिक जागरूकता:
स्थानीय लोगों को आपदा प्रबंधन का प्रशिक्षण दिया जाए और विद्यालय स्तर पर जल–आपदा शिक्षा को शामिल किया जाए।

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में बढ़ती जल–प्रलय संबंधी आपदाएँ प्रकृति और मानव के असंतुलित संबंध का परिणाम हैं। विकास आवश्यक है, परंतु वह पर्यावरणीय संतुलन के साथ होना चाहिए। यदि जल स्रोतों, वनों और पर्वतीय ढलानों का संरक्षण किया जाए और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया जाए, तो जल–प्रलय की तीव्रता को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

प्रकृति के साथ सामंजस्य ही सुरक्षित भविष्य की कुंजी है। उत्तराखंड की नदियाँ जीवन दायिनी बनी रहें, यही हमारी सामूहिक जिम्मेदारी है।

उत्तराखंड की सदानीरा नदियाँ: हिमालय का जलीय और वैज्ञानिक आधार

उत्तराखंड का हिमालयी क्षेत्र 'एशिया का जल स्तंभ' (Water Tower of Asia) कहलाता है। यहाँ से निकलने वाली नदियाँ सदानीरा (Perennial) हैं, अर्थात् इनका प्रवाह वर्ष भर बना रहता है। इसका कारण केवल वर्षा नहीं, बल्कि हिमनदों का पिघलना, हिमपात, तथा भू–गर्भीय जल का सतत रिसाव है।

प्रमुख नदी तंत्रों का वैज्ञानिक विवरण

1. गंगा की मुख्य स्रोतधारा: भागीरथी

वैज्ञानिक और भौगोलिक दृष्टि से गंगा का अस्तित्व गंगोत्री हिमनद (गोमुख) से ही प्रारंभ हो जाता है। भागीरथी के नाम से सम्बोधित यह धारा हिमनदीय जल (Glacial melt) से पोषित एक तीव्र प्रवाह वाली नदी है। इसे ही गंगा की वास्तविक और प्रमुख स्रोतधारा माना जाता है, जो हिमालय के कठोर भू–भागों को काटती हुई आगे बढ़ती है।

2. अलकनंदा तंत्र:

इसका उद्‌गम बद्रीनाथ के समीप सतोपंथ हिमनद से होता है। यह एक विशाल जल–तंत्र है जो धौलीगंगा, नंदाकिनी, पिंडर और मंदाकिनी जैसी सहायक नदियों को आत्मसात करता है। देवप्रयाग वह विशिष्ट स्थल है जहाँ भागीरथी और अलकनंदा का संगम होता है और यहाँ से यह संयुक्त धारा 'गंगा' के नाम से जानी जाती है।

3. यमुना और टोंस तंत्र

यमुना का उद्‌गम यमनोत्री हिमनद (बंदरपूंछ चोटी) से होता है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण सहायक नदी टोंस है, जो रुपिन और सुपिन धाराओं के मिलने से बनती है। वैज्ञानिक दृष्टि से टोंस नदी में यमुना की मुख्य धारा से भी अधिक जल की मात्रा होती है, जो इसे उत्तराखंड की एक शक्तिशाली सदानीरा प्रणाली बनाती है।

4. काली (शारदा) तंत्र

पूर्वी उत्तराखंड (कुमाऊं) की यह मुख्य नदी कालापानी क्षेत्र के हिमनदों से निकलती है। यह भारत और नेपाल की सीमा का निर्धारण करती है। धौलीगंगा (पूर्वी) और गोरीगंगा इसके मुख्य हिमनदीय स्रोत हैं, जो इसका साल भर प्रवाह बनाए रखती हैं।

5. मंदाकिनी और सरयू

केदारनाथ के चोराबाड़ी हिमनद से निकलने वाली मंदाकिनी और नंदाकोट के समीप से निकलने वाली सरयू अपनी पवित्रता और निरंतर प्रवाह के लिए जानी जाती हैं। ये नदियाँ स्थानीय पारिस्थितिकी को नमी प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

सदानीरा प्रवाह का वैज्ञानिक आधार:
उत्तराखंड की इन नदियों का सालभर बहना तीन प्रमुख वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से संभव होता है:

हिमनद पिघलन (Glacier Melt): ग्रीष्म ऋतु में जब वर्षा न्यूनतम होती है, तब उच्च हिमालयी ग्लेशियरों का पिघलना इन जलधाराओं को स्थिर प्रवाह प्रदान करता है।
हिमपात और वर्षा: शीतकालीन हिमपात हिमनदों के पुनर्भरण (Recharge) का कार्य करता है, जबकि मानसूनी वर्षा जल चक्र की तात्कालिक आवश्यकता को पूरा करती है।
भू–गर्भीय रिसाव (Base Flow): हिमालय की दरारयुक्त चट्टानें 'स्पंज' की तरह कार्य करती हैं। ये जल को संचित कर धीरे–धीरे छोड़ती हैं, जिससे शुष्क समय में भी नदियों का प्रवाह बना रहता है।

पारिस्थितिक और आर्थिक महत्व:
यह जल तंत्र उत्तर भारत की कृषि, पेयजल, और खाद्य सुरक्षा की रीढ़ है। हिमालय की तीव्र ढाल इन नदियों को 'काइनेटिक ऊर्जा' से भरपूर बनाती है, जिससे जलविद्युत उत्पादन (जैसे टिहरी और अन्य परियोजनाएं) संभव होता है। साथ ही, ये नदियाँ अपने साथ खनिजों से भरपूर गाद (Silt) लाती हैं, जो मैदानों को उर्वर बनाती हैं।

जलवायु परिवर्तन और भविष्य:
हिमनदों का सिकुड़ना (Glacial Retreat) एक वैश्विक चुनौती है। यदि ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर तेज़ी से घटते हैं, तो भविष्य में इन सदानीरा नदियों का शीतकालीन प्रवाह प्रभावित हो सकता है। इसलिए निरंतर वैज्ञानिक अध्ययन, सघन वनीकरण और संतुलित विकास नीति आज की अनिवार्य आवश्यकता है।

उत्तराखंड की ये सदानीरा नदियाँ हिमालय की जीवन रेखा हैं–जो वैज्ञानिक, पारिस्थितिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भारत की एक अमूल्य धरोहर हैं।

जल गुणवत्ता:
जीवन का आधार, महत्व और प्रबंधन

'रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून। 'रहीम दास जी का यह दोहा आज के परिप्रेक्ष्य में और भी प्रासंगिक हो गया है। पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व पूरी तरह जल पर निर्भर है, लेकिन केवल 'जल' होना पर्याप्त नहीं है; उसका 'स्वच्छ और गुणवत्तापूर्ण' होना अनिवार्य है। जल की गुणवत्ता से तात्पर्य उसकी उन भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं से है, जो उसे पीने, कृषि और उद्योगों के लिए उपयुक्त बनाती हैं।

1. जल गुणवत्ता के प्रमुख मानक (Parameters)

जल की शुद्धता को मापने के लिए वैज्ञानिक रूप से तीन श्रेणियों का उपयोग किया जाता है:

क. भौतिक मानक

तापमान: यह जलीय जीवन और रासायनिक प्रतिक्रियाओं की गति को प्रभावित करता है।
मैलापन (Turbidity): पानी में मौजूद निलंबित कणों के कारण आने वाला धुंधलापन।
रंग और गंध: यह पानी में घुले कार्बनिक पदार्थों या प्रदूषण का संकेत देते हैं।

ख. रासायनिक मानक

pH मान: यह जल की अम्लीयता या क्षारीयता को दर्शाता है। शुद्ध जल का pH 7 (उदासीन) होता है। 7 से कम होने पर जल अम्लीय और 7 से अधिक होने पर क्षारीय कहलाता है।

TDS (कुल घुलनशील ठोस): जल में घुले हुए लवण (जैसे कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम)। इसे मापने के लिए TDS मीटर का प्रयोग किया जाता है।

सूत्र: TDS(mg/l)=V
(A-B)X1000
(जहाँ A और B प्याली का अंतिम व प्रारंभिक भार है, और V जल का आयतन है।)
घुलित ऑक्सीजन (DO): जलीय जीवों के श्वसन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की मात्रा।
विषाक्त तत्व: सीसा (Lead), पारा (Mercury) और आर्सेनिक जैसे भारी तत्व जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत घातक हैं।

ग. जैविक मानक

कोलीफॉर्म बैक्टीरिया: इनकी उपस्थिति यह दर्शाती है कि जल मल–मूत्र या गंदगी से संदूषित है।
शैवाल: अधिक पोषक तत्वों के कारण होने वाला 'यूट्रोफिकेशन' ऑक्सीजन की कमी पैदा करता है।

2. जल गुणवत्ता का महत्वः हमें शुद्ध जल क्यों चाहिए?

क्षेत्र	प्रभाव और महत्व
मानव स्वास्थ्य	शरीर में 60–70 प्रतिशत पानी होता है। दूषित जल से हैजा, टाइफाइड और पेचिश जैसी बीमारियां होती हैं।
पारिस्थितिकी	मछलियों और जलीय पौधों के जीवित रहने के लिए संतुलित pH और ऑक्सीजन जरूरी है।
अर्थव्यवस्था	उद्योगों को विशिष्ट गुणवत्ता वाला पानी चाहिए; प्रदूषित जल मशीनों को खराब करता है और उपचार लागत बढ़ाता है।
कृषि	प्रदूषित जल फसलों की पैदावार और मिट्टी की उर्वरता को नष्ट कर सकता है।

3. जल गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक

प्राकृतिक कारकः

चट्टानों के खनिज, जलवायु परिवर्तन, वर्षा और जैविक अपघटन जैसी प्राकृतिक प्रक्रियाएं जल के रासायनिक संगठन को बदल देती हैं।

मानवीय हस्तक्षेप (प्रमुख चिंता)

औद्योगिक कचराः कारखानों से निकलने वाले रसायन और भारी धातुएं सीधे नदियों में बहा दी जाती हैं।

कृषि अपवाहः रसायनों, उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग वर्षा के साथ जल स्रोतों में मिल जाता है।

शहरीकरणः सीवेज (मल–जल) का अनुचित प्रबंधन और वनों की कटाई से जल का प्राकृतिक निस्पंदन (filtration) कम हो गया है।

4. आधुनिक निगरानी और मापन तकनीकें

आज के समय में जल की शुद्धता जांचने के लिए उन्नत तरीके उपलब्ध हैं:

फील्ड टेस्टः पोर्टेबल मीटर द्वारा मौके पर ही pH और टर्बिडिटी की जांच।

सेंसर तकनीकः जल सुरक्षा के लिए 'रियल–टाइम' सेंसर जो संदूषण का तुरंत पता लगाते हैं।

रिमोट सेंसिंगः उपग्रहों और ड्रोन के माध्यम से बड़े जल निकायों की निगरानी।

जैविक संकेतकः कुछ विशिष्ट जीवों की उपस्थिति से जल के स्वास्थ्य का पता लगाना।

हिमालयी मीठे जल पारितंत्र का दर्पण
डोडीताल झील

गढ़वाल हिमालय में लगभग 3,024–3,050 मीटर की ऊँचाई पर स्थित डोडीताल झील एक विशिष्ट उच्च हिमालयी मीठे जल (Freshwater) पारितंत्र का उत्कृष्ट उदाहरण है। लगभग 850 मीटर लंबी और 300–350 मीटर चौड़ी यह झील हिमपात, वर्षा तथा पर्वतीय झरनों से पोषित होती है और असीगंगा नदी के उद्गम क्षेत्र का निर्माण करती है।

वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार डोडीताल एक अल्प–पोषी (Oligotrophic) झील है, जहाँ पोषक तत्वों की सीमित मात्रा के कारण जल अत्यंत स्वच्छ, पारदर्शी और ऑक्सीजन–समृद्ध बना रहता है। APHA मानकों के आधार पर किए गए भौतिक–रासायनिक विश्लेषण इसके संतुलित जल–रसायन को प्रमाणित करते हैं।

भौतिक गुण

- जल तापमानः 2°C–8°C (निम्न तापमान गैसों की घुलनशीलता बढ़ाता है)
- उच्च पारदर्शिताः न्यून निलंबित कण और कम जैविक प्रदूषण
- रासायनिक गुण pH: 6.5–7.2 (तटस्थ से हल्का क्षारीय, WHO मानक के भीतर)
- घुलित ऑक्सीजन (DO): 8–11 mg/L — जलीय जीवन हेतु अनुकूल
- कुल घुलित ठोस (TDS): ~10 ppm से कम – स्वच्छता का संकेत
- क्षारीयताः 33–40 mg/L — बफर क्षमता दर्शाती है
- कठोरताः 14–16 ppm — सॉफ्ट वाटर
- मुक्त CO_2: 3.5–5 mg/L — प्रकाश संश्लेषण में सहायक
- फॉस्फेट व क्लोराइडः सामान्य सीमा में, यूट्रोफिकेशन का जोखिम न्यून

उच्च DO और निम्न TDS स्तर डोडीताल को हिमालयी जल पारितंत्र की स्वस्थ अवस्था का संकेतक बनाते हैं। यहाँ पाई जाने वाली हिमालयी ब्राउन ट्राउट मछली स्वच्छ एवं ऑक्सीजन–समृद्ध जल की जैव–संकेतक प्रजाति है।

डोडीताल झील वर्तमान में पारिस्थितिक रूप से संतुलित एवं वैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मीठे जल प्रणाली है। किन्तु जलवायु परिवर्तन, बढ़ते पर्यटन और मानवीय हस्तक्षेप इसके जल–रसायन को प्रभावित कर सकते हैं। अतः नियमित मॉनिटरिंग और सतत प्रबंधन अत्यावश्यक है।

डोडीताल हिमालय की जल–संपदा का जीवंत दर्पण है–जहाँ जल, पारिस्थितिकी और विज्ञान एक साथ परिलक्षित होते हैं।

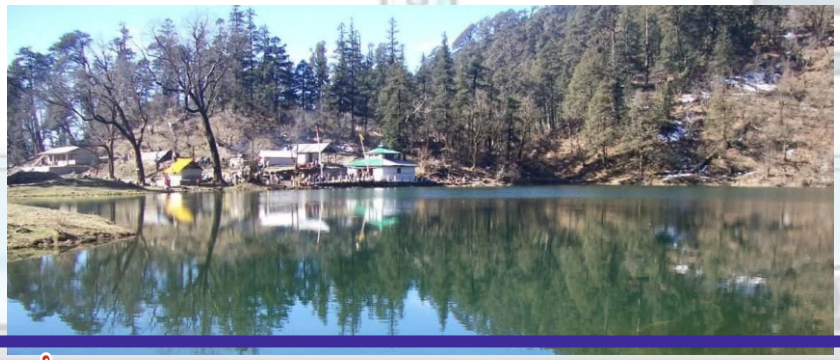

जल पुरुष राजेंद्र सिंह

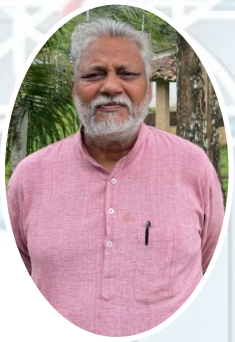

राजेंद्र सिंह, जिन्हें पूरी दुनिया 'भारत के जल पुरुष' (Waterman of India) के रूप में सम्मान देती है, एक ऐसे दूरदर्शी व्यक्तित्व हैं जिन्होंने आधुनिक भारत में जल संरक्षण की परिभाषा बदल दी। 6 अगस्त 1959 को उत्तर प्रदेश के बागपत जिले के डौला गांव में जन्मे राजेंद्र सिंह ने अपनी शुरुआती शिक्षा और करियर की शुरुआत एक सरकारी सेवक के रूप में की थी। 1980 के दशक की शुरुआत में वे जयपुर में राष्ट्रीय सेवा स्वयंसेवक के रूप में कार्यरत थे, जहाँ उनका काम मुख्य रूप से प्रौढ़ शिक्षा से जुड़ा था। लेकिन समाज के प्रति उनकी गहरी संवेदना उन्हें कुछ ठोस और बुनियादी परिवर्तन करने की ओर खींच रही थी।

उनके जीवन का सबसे बड़ा मोड़ तब आया जब 1984 में उन्होंने अपनी सरकारी नौकरी छोड़ दी और राजस्थान के सबसे पिछड़े और सूखे इलाकों की ओर रुख किया। उन्होंने अपने घर का सारा सामान बेचकर मात्र 23,000 रुपये जुटाए और अपने कुछ साथियों के साथ बस पकड़कर अलवर जिले के 'किशोरी' गांव पहुँच गए। शुरुआत में ग्रामीण उन्हें संदेह की दृष्टि से देखते थे और उन्हें बच्चा चोर या कोई सरकारी एजेंट समझते थे। लेकिन वहां के एक बुजुर्ग ग्रामीण ने उन्हें एक जीवन बदलने वाली सलाह दी। उस बुजुर्ग ने कहा कि इस तपते रेगिस्तान में लोगों को 'अक्षरों' की नहीं बल्कि 'पानी' की जरूरत है। इसी सीख ने राजेंद्र सिंह को शिक्षा से जल संरक्षण की ओर मोड़ दिया।

उन्होंने 'तरुण भारत संघ' (TBS) के माध्यम से प्राचीन भारतीय जल संचयन तकनीक 'जोहड़' को फिर से जीवित करने का बीड़ा उठाया। जोहड़ मिट्टी के छोटे, अर्धचंद्राकार चेक डैम होते हैं जो बारिश के पानी को बहने से रोकते हैं और उसे जमीन के भीतर रिसने (Percolation) में मदद करते हैं। राजेंद्र सिंह ने बिना किसी आधुनिक इंजीनियरिंग डिग्री या भारी मशीनों के, केवल ग्रामीणों के श्रम और पारंपरिक ज्ञान के बल पर हजारों जोहड़ बनवाए। इसका परिणाम चमत्कारिक रहा; न केवल भूजल स्तर (Ground water level) ऊपर आया, बल्कि राजस्थान की पांच सूखी हुई नदियां–अवरी, रूपारेल, सरसा, भगानी और जहाज वाली फिर से जीवित हो उठीं। यह आधुनिक युग में प्रकृति के पुनरुद्धार की सबसे बड़ी कहानियों में से एक है।

उनके इन अथक प्रयासों ने न केवल पर्यावरण को सुधारा बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी पुनर्जीवित किया। जिन गांवों से लोग पानी की कमी के कारण पलायन कर चुके थे, वे वापस लौटने लगे और खेती फिर से लहलहाने लगी। उनके कार्यों की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सराहना हुई और उन्हें 2001 में 'रमन मैग्सेसे पुरस्कार' तथा 2015 में 'स्टॉकहोम जल पुरस्कार' से नवाजा गया, जिसे 'पानी का नोबेल' कहा जाता है। 2008 में 'द गार्डियन' ने उन्हें पृथ्वी को बचाने वाले 50 सबसे प्रभावशाली लोगों की सूची में शामिल किया। आज भी वे 'गंगा बचाओ' आंदोलन और जलवायु परिवर्तन के खिलाफ वैश्विक मंचों पर एक प्रखर आवाज बने हुए हैं।

पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक जल संकटः चाल–खाल एक वरदान

उत्तराखंड के पर्वतीय भूगोल में चाल–खाल जल प्रबंधन की एक ऐसी अद्भुत और वैज्ञानिक धरोहर है, जो 'कैच द रेन' (Catch the Rain) के आधुनिक सिद्धांत पर सदियों से काम कर रही है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो पहाड़ों में बारिश का पानी ढलान के कारण बहुत तीव्र गति से बह जाता है, जिसे 'सरफेस रन–ऑफ' (Surface Run & off) कहते हैं। इस तेज बहाव के कारण पानी को जमीन के भीतर रिसने का समय नहीं मिल पाता, जिससे भूजल का स्तर गिर जाता है और मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत भी बह जाती है।

वैज्ञानिक कार्यप्रणाली और संरचनाः

व्यवहारिक रूप से चाल और खाल का निर्माण पहाड़ों की ऊँची चोटियों या ढलानों के उन हिस्सों पर किया जाता है, जहाँ से वर्षा का पानी प्राकृतिक रूप से बहता है।

चाल (Small Pits):

ये आकार में छोटे और उथले होते हैं, जो घास के मैदानों या बुग्यालों के पास बनाए जाते हैं। इनका मुख्य काम मिट्टी में नमी (Soil Moisture) को बनाए रखना होता है।

खाल (Large Ponds):

ये आकार में बड़े और गहरे होते हैं। इनका वैज्ञानिक महत्व यह है कि ये पानी के हाइड्रोस्टेटिक दबाव (Hydrostatic Pressure) का उपयोग करते हैं। जब इन खालों में भारी मात्रा में पानी जमा होता है, तो वह दबाव के कारण जमीन की गहरी परतों में रिसता है।

भूजल पुनर्भरण (Ground water Recharge) का विज्ञानः

पहाड़ों के भीतर चट्टानों और मिट्टी के बीच प्राकृतिक नलिकाएं (Aquifers) होती हैं। चाल–खाल में जमा पानी इन्हीं नलिकाओं के माध्यम से धीरे–धीरे नीचे की ओर बढ़ता है। यही वैज्ञानिक प्रक्रिया ढलान के नीचे स्थित नौले और धारों (प्राकृतिक जल स्रोतों) को पुनर्जीवित करती है। यह एक 'स्लो रिलीज' सिस्टम की तरह काम करता है, जो मानसून के बीत जाने के कई महीनों बाद भी जल स्रोतों में पानी का प्रवाह बनाए रखता है।

पारिस्थितिक और व्यवहारिक लाभः

मृदा अपरदन पर नियंत्रणः पानी की गति को रोककर यह तकनीक भूस्खलन (Landslides) के खतरों को कम करती है क्योंकि यह मिट्टी के कटाव को वैज्ञानिक तरीके से नियंत्रित करती है।

स्थानीय सूक्ष्म–जलवायु (Micro - Climate):
बड़े स्तर पर चाल–खाल के निर्माण से स्थानीय वाष्पीकरण (Evaporation) बढ़ता है, जिससे आसपास की आर्द्रता संतुलित रहती है और वनस्पतियों की वृद्धि बेहतर होती है।

न्यूनतम लागत, अधिकतम लाभ:
इसमें किसी भी प्रकार के कंक्रीट या कृत्रिम रसायनों का प्रयोग नहीं होता, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) पूरी तरह सुरक्षित रहता है।

आज के समय में जब जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा का पैटर्न अनिश्चित हो गया है, तब चाल–खाल जैसी वैज्ञानिक पद्धति न केवल जल संरक्षण के लिए, बल्कि हिमालयी क्षेत्र की जैव–विविधता और कृषि को बचाने के लिए सबसे प्रभावी और व्यवहारिक समाधान है।

राजा भोज के जल संरक्षण कार्य

11वीं सदी के परमार वंश के शासक राजा भोज (लगभग 1000–1055 ई.) अपने प्रशासन, विद्वता और निर्माण कार्यों के लिए प्रसिद्ध थे। जल संरक्षण के क्षेत्र में उनका सबसे बड़ा कार्य भोपाल में भोजताल (जिसे आज 'ऊपरी झील' या बड़ा तालाब कहा जाता है) का निर्माण माना जाता है।

कहा जाता है कि उस समय भोपाल क्षेत्र में पानी की कमी थी। राजा भोज ने आसपास की पहाड़ियों और जलधाराओं का निरीक्षण कर ऐसी जगह चुनी, जहाँ वर्षा का पानी स्वाभाविक रूप से इकट्ठा हो सके। उन्होंने मिट्टी और पत्थरों से एक मजबूत बाँध बनवाया, जिससे कई छोटी नदियों और बरसाती धाराओं का पानी रोककर एक बड़ी झील तैयार की गई। यह झील आज भी भोपाल शहर के लिए पेयजल का मुख्य स्रोत है।

भोजताल का निर्माण उस समय की इंजीनियरिंग समझ का उदाहरण है। बिना आधुनिक मशीनों के इतनी विशाल झील बनाना आसान नहीं था। इस झील ने न केवल पानी की समस्या हल की, बल्कि खेती, पशुपालन और स्थानीय जीवन को भी सहारा दिया।

इतिहास में यह भी उल्लेख मिलता है कि राजा भोज ने अन्य स्थानों पर भी तालाब और जल संरचनाएँ बनवाईं। इससे स्पष्ट होता है कि वे जल के महत्व को समझते थे और वर्षाजल को संचित करने की परंपरा को बढ़ावा देते थे।

आज के समय में जब जल संकट एक बड़ी समस्या बनता जा रहा है, तब राजा भोज का कार्य हमें सिखाता है कि स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक ढाल का सही उपयोग कर लंबे समय तक पानी सुरक्षित रखा जा सकता है। उनका जल संरक्षण मॉडल भारतीय परंपरा की एक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायक धरोहर है।

लेक पिछोला :
पारंपरिक जल संरक्षण का ऐतिहासिक मॉडल

पिछोला झील राजस्थान की सबसे प्राचीन और प्रसिद्ध झीलों में से एक है। यह केवल अपनी सुंदरता के लिए ही नहीं, बल्कि पारंपरिक जल संरक्षण की उत्कृष्ट व्यवस्था के लिए भी जानी जाती है। अरावली की पहाड़ियों से घिरा यह जलाशय वर्षाजल संचयन का एक सशक्त उदाहरण है, जिसने सदियों से उदयपुर क्षेत्र की जल आवश्यकता को पूरा किया है।

इस झील का निर्माण 1362 ईस्वी में महाराजा लाखा के शासनकाल में पिचू बंजारा द्वारा कराया गया था। इसकी लंबाई लगभग 3 मील, चौड़ाई 2 मील और गहराई लगभग 30 फीट है। बाद में मेवाड़ के शासक महाराणा उदय सिंह द्वितीय इसकी उपयोगिता और सुंदरता से प्रभावित हुए। उन्होंने झील का विस्तार कराया, बाँध बनवाया और इसके तट पर उदयपुर शहर की स्थापना की। इस प्रकार यह झील केवल प्राकृतिक सौंदर्य का केंद्र नहीं रही, बल्कि नगर विकास और जल प्रबंधन का आधार भी बनी।

'पिछोला' नाम पास के 'पिछोली' गाँव के नाम पर पड़ा। झील के चारों ओर बने महल, संगमरमर के मंदिर, हवेलियाँ और स्नान घाट न केवल ऐतिहासिक धरोहर हैं, बल्कि जल के साथ मानव जीवन के गहरे संबंध को भी दर्शाते हैं। झील के मध्य स्थित जग निवास (वर्तमान लेक पैलेस) और जग मंदिर इसकी स्थापत्य भव्यता को और बढ़ाते हैं।

पिछोला झील आज भी उदयपुर की जल व्यवस्था का महत्वपूर्ण भाग है। यह दर्शाती है कि प्राचीन काल में भी वर्षाजल का संचयन, बाँध निर्माण और प्राकृतिक ढाल का उपयोग कर दीर्घकालिक जल संरक्षण संभव था। वर्तमान जल संकट के समय में यह झील हमें पारंपरिक ज्ञान और सतत जल प्रबंधन की प्रेरणा देती है।

आनासागर झील :
जल संरक्षण की ऐतिहासिक विरासत

राजस्थान जैसे शुष्क प्रदेश में जल का महत्व सदैव जीवनरेखा के समान रहा है। अजमेर के मध्य स्थित आनासागर झील केवल एक पर्यटन स्थल नहीं, बल्कि जल संरक्षण की प्राचीन भारतीय परंपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है। 12वीं शताब्दी में राजा अरणोराज (आनाजी) द्वारा निर्मित यह कृत्रिम झील वर्षा जल संचयन की दूरदर्शी योजना का परिणाम थी। उस समय न तो आधुनिक तकनीक थी और न ही उन्नत साधन, फिर भी स्थानीय भू–आकृति और जल प्रवाह को समझकर इस विशाल जलाशय का निर्माण किया गया।

यह झील लगभग 13 किलोमीटर की परिधि में फैली हुई है और आसपास की पहाड़ियों, विशेषकर नाग पहाड़ से आने वाले वर्षा जल को संचित करती रही है। इससे न केवल पेयजल की आवश्यकता पूरी होती थी, बल्कि सिंचाई और जनजीवन को भी स्थिरता मिलती थी। इस प्रकार आनासागर झील मध्यकालीन जल प्रबंधन प्रणाली का सशक्त उदाहरण है।

मुगल काल में शाहजहाँ द्वारा निर्मित संगमरमर की बारहदारियाँ और कटहरा केवल सौंदर्यवर्धन के लिए नहीं थे, बल्कि झील के तटों को सुदृढ़ बनाने और जल संरचना की रक्षा में भी सहायक रहे। झील के किनारे विकसित दौलत बाग़ (सुभाष उद्यान) ने हरित आवरण बढ़ाकर पर्यावरण संतुलन में योगदान दिया।

आज के संदर्भ में आनासागर झील हमें यह संदेश देती है कि जल संरक्षण केवल तकनीक का विषय नहीं, बल्कि सामूहिक जिम्मेदारी है। शहरीकरण, प्रदूषण और अतिक्रमण से जलाशयों का अस्तित्व संकट में पड़ सकता है। यदि हम वर्षा जल संचयन, अपशिष्ट जल प्रबंधन और तटीय हरियाली संरक्षण जैसे उपाय अपनाएँ, तो ऐसी ऐतिहासिक झीलें भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी जीवन दायिनी बनी रह सकती हैं।

आनासागर झील इस बात का प्रमाण है कि जल का सम्मान और संरक्षण हमारी सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा रहा है – आवश्यकता है उसे पुनः अपनाने और सुरक्षित रखने की।

चन्दन सिंह नयाल:
पर्यावरण और जल संरक्षण के प्रति समर्पित व्यक्तित्व

निवासी: नाई गाँव, ओखलकांडा ब्लॉक, जनपद नैनीताल (उत्तराखंड)
पहचान: 'वॉटर हीरो' और प्रखर पर्यावरण कार्यकर्ता

प्रमुख कार्य और उपलब्धियां:

जल संरक्षण (Water Conservation): चन्दन नयाल ने नैनीताल और अल्मोड़ा के दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में 6,000 से अधिक 'चाल–खाल' (पारंपरिक छोटे तालाब) और खंतियों का निर्माण किया है।

इन जल कुंडों के माध्यम से उन्होंने न केवल बारिश के पानी को सहेजा है, बल्कि सूख चुके कई पारंपरिक जल स्रोतों (नौलों और धारों) को पुनर्जीवित करने में सफलता पाई है।

वृक्षारोपण अभियान: पिछले एक दशक में उन्होंने 60,000 से अधिक पौधों का रोपण किया है और लगभग 83,000 पौधे आम जनता को निःशुल्क वितरित किए हैं।
वे विशेष रूप से 'बांज' (Oak) के पेड़ों को लगाने पर जोर देते हैं, जिन्हें वे 'पानी की फैक्ट्री' मानते हैं। उन्होंने अपनी स्वयं की नर्सरी भी तैयार की है।

वनाग्नि (Forest Fire) पर नियंत्रण:

चीड़ के जंगलों में लगने वाली आग को रोकने के लिए वे स्थानीय युवाओं के साथ मिलकर काम करते हैं। वे चीड़ के वनों को मिश्रित वनों (चौड़ी पत्ती वाले पेड़) में बदलने के मिशन पर हैं ताकि वनाग्नि की घटनाओं को कम किया जा सके।

सामुदायिक जुड़ाव: उन्होंने लगभग 150 सक्रिय युवाओं की एक टीम तैयार की है, जो स्कूलों और गांवों में जाकर पर्यावरण संरक्षण का संदेश फैलाती है।

अद्वितीय संकल्प: प्रकृति के प्रति उनका समर्पण इतना गहरा है कि उन्होंने अपनी मृत्यु के बाद देह दान का संकल्प लिया है, ताकि उनके अंतिम संस्कार के लिए पेड़ों को न काटना पड़े।

प्रमुख सम्मान और पुरस्कार:
चन्दन सिंह नयाल के कार्यों को राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर सराहा गया है:

वॉटर हीरो सम्मान: भारत सरकार के जल शक्ति मंत्रालय द्वारा उन्हें 'वॉटर हीरो' की उपाधि से सम्मानित किया गया है।

प्रधानमंत्री द्वारा सराहनाः 4 दिसंबर 2020 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने 'मन की बात' कार्यक्रम के आधिकारिक सोशल मीडिया हैंडल के माध्यम से उनके प्रयासों का उल्लेख किया था।

उत्तराखंड रत्नः उन्हें उत्तराखंड की प्रतिष्ठित विभूति के रूप में 'उत्तराखंड रत्न' से नवाजा गया है।

सुंदर लाल बहुगुणा स्मृति वृक्ष मित्र पुरस्कारः पर्यावरण के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए उन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ है।

यंग अचीवर अवार्डः विभिन्न सामाजिक संस्थाओं ने उन्हें 'यूथ आइकॉन' और 'यंग अचीवर' के रूप में सम्मानित किया है।

जलः
जीवन, प्रकृति और मानव सभ्यता का आधार

जल पृथ्वी पर जीवन का सबसे महत्वपूर्ण आधार है। यह एक पारदर्शी, रंगहीन, गंधहीन और स्वादहीन द्रव है, जिसे हम सामान्य रूप से पानी कहते हैं। मनुष्य, पशु, पक्षी, पेड़–पौधे– सभी जीवित प्राणियों के लिए जल अनिवार्य है। बिना जल के जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसीलिए कहा जाता है कि "जल ही जीवन है।"

वैज्ञानिक दृष्टि से जल दो तत्वों–हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से मिलकर बना है। इसका रासायनिक सूत्र H_2O है। जल की विशेषता यह है कि यह तीन अवस्थाओं में पाया जाता है– ठोस (बर्फ), द्रव (पानी) और गैस (भाप)। यह अनेक पदार्थों को घोलने की क्षमता रखता है, इसलिए इसे सार्वत्रिक विलायक भी कहा जाता है।

मानव शरीर का लगभग 60 से 70 प्रतिशत भाग जल से बना होता है। हमारे शरीर में रक्त संचार, पाचन क्रिया, शरीर का तापमान नियंत्रित रखना और अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालना–इन सभी प्रक्रियाओं में जल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पौधों में जल प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में सहायक होता है, जिससे भोजन और ऑक्सीजन का निर्माण होता है।

पृथ्वी की सतह का लगभग 71 प्रतिशत भाग जल से ढका है, लेकिन इसमें से लगभग 97 प्रतिशत जल समुद्रों में खारा है। केवल 3 प्रतिशत जल मीठा है, और उसमें से भी अधिकांश भाग हिमनदों और बर्फ के रूप में जमा है। इसका अर्थ है कि पीने योग्य जल बहुत सीमित मात्रा में उपलब्ध है।

प्रकृति में जल निरंतर एक चक्र में घूमता रहता है, जिसे जल चक्र कहा जाता है। सूर्य की गर्मी से जल वाष्प बनकर ऊपर उठता है, बादल बनाता है, फिर वर्षा के रूप में धरती पर गिरता है और नदियों, झीलों तथा भू–जल में संचित हो जाता है। यही चक्र पृथ्वी पर जल संतुलन बनाए रखता है।

इतिहास में अधिकांश सभ्यताएँ नदियों के किनारे विकसित हुईं। खेती, व्यापार, परिवहन और सामाजिक जीवन–सबका आधार जल रहा है। आज भी उद्योग, कृषि और घरेलू उपयोग के लिए जल अत्यंत आवश्यक है।

वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, वनों की कटाई और प्रदूषण के कारण जल संकट गहराता जा रहा है। कई स्थानों पर भू–जल स्तर गिर रहा है और नदियाँ प्रदूषित हो रही हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा का स्वरूप भी असंतुलित होता जा रहा है।

ऐसी स्थिति में जल का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। वर्षा जल संचयन, जल का संयमित उपयोग, पारंपरिक जल स्रोतों की रक्षा, वृक्षारोपण और प्रदूषण रोकना– ये सभी उपाय जल संरक्षण में सहायक हो सकते हैं।

जल केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि जीवन, प्रकृति और सभ्यता का मूल आधार है। यदि हम आज जल को बचाएंगे, तभी आने वाली पीढ़ियाँ सुरक्षित और स्वस्थ जीवन जी सकेंगी। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह जल का सम्मान करे और उसका विवेकपूर्ण उपयोग करे।

पानी और सोडियमः
शांत द्रव और उग्र धातु की रोचक कहानी

पानी प्रकृति का सबसे शांत, जीवनदायी और आवश्यक पदार्थ है, जबकि सोडियम एक अत्यंत क्रियाशील धातु है। जब ये दोनों एक–दूसरे के संपर्क में आते हैं, तो एक साधारण–सी दिखने वाली मुलाकात अचानक तीव्र रासायनिक प्रतिक्रिया में बदल जाती है। यह घटना विज्ञान की दुनिया में बहुत प्रसिद्ध है।

पानीः जीवन का आधार

- पानी (H_2O) एक रंगहीन, गंधहीन और स्वादहीन द्रव है। यह पृथ्वी पर जीवन का मूल आधार है।
- मानव शरीर का लगभग दो–तिहाई भाग पानी से बना है।
- पौधों में भोजन बनाने की प्रक्रिया (प्रकाश संश्लेषण) पानी पर निर्भर करती है।
- नदियाँ, झीलें और वर्षा जीवन चक्र को संतुलित रखती हैं।
- वैज्ञानिक दृष्टि से पानी एक स्थिर यौगिक है, जो हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से मिलकर बना है।

सोडियमः अत्यंत क्रियाशील धातु

सोडियम (Na) आवर्त सारणी के समूह 1 (Alkali Metals) का तत्व है।

इसके बाहरी आवरण में केवल 1 इलेक्ट्रॉन होता है, जिसे यह बहुत आसानी से छोड़ देता है। यही कारण है कि सोडियम अत्यधिक क्रियाशील (Highly Reactive) होता है।

यह प्रकृति में स्वतंत्र रूप से नहीं पाया जाता, क्योंकि यह तुरंत अन्य तत्वों से मिलकर यौगिक बना लेता है। प्रयोगशाला में इसे सुरक्षित रखने के लिए तेल या केरोसीन में डुबोकर रखा जाता है।

जब पानी और सोडियम मिलते हैंः

जब सोडियम का छोटा टुकड़ा पानी में डाला जाता है, तो यह रासायनिक अभिक्रिया होती हैः

$2Na + 2H_2O \rightarrow 2NaOH + H_2 + Heat$

इस अभिक्रिया मेंः

- सोडियम हाइड्रॉक्साइड (NaOH) बनता है
- हाइड्रोजन गैस निकलती है
- अत्यधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है
- यह अभिक्रिया ऊष्माक्षेपी (Exothermic) होती है, अर्थात इसमें बहुत अधिक गर्मी निकलती है।

प्रतिक्रिया इतनी तीव्र क्यों होती है?

- अभिक्रिया से निकलने वाली गर्मी हाइड्रोजन गैस को तुरंत जला सकती है।
- गैस जलने पर छोटी लौ बन सकती है।
- यदि सोडियम का टुकड़ा बड़ा हो, तो छोटा धमाका भी हो सकता है।

सोडियम पानी की सतह पर तैरता है, क्योंकि उसकी घनत्व पानी से कम होती है। प्रतिक्रिया के दौरान निकलने वाली गैस के कारण वह इधर–उधर तेजी से भागता हुआ दिखाई देता है।

वैज्ञानिक महत्व:

यह प्रतिक्रिया हमें रासायनिक क्रियाशीलता, ऊर्जा परिवर्तन और तत्वों के गुणों को समझने में मदद करती है। यह उदाहरण बताता है कि पदार्थों का स्वभाव अलग–अलग होता है और उनका संयोजन नई परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है।

निष्कर्ष:

पानी शांति और जीवन का प्रतीक है, जबकि सोडियम ऊर्जा और क्रियाशीलता का। जब ये दोनों मिलते हैं, तो एक शक्तिशाली रासायनिक प्रतिक्रिया जन्म लेती है। यह घटना विज्ञान की उस सच्चाई को दर्शाती है कि प्रकृति के छोटे–से छोटे तत्व में भी अद्भुत शक्ति छिपी होती है।

• वेदों में जल का उल्लेख

भारतीय संस्कृति में जल को केवल प्राकृतिक तत्व नहीं, बल्कि जीवन, पवित्रता और दिव्यता का प्रतीक माना गया है। वेदों–विशेषकर ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेदः में जल की महिमा अनेक मंत्रों में वर्णित है।

1. ऋग्वेद में जल

ऋग्वेद में जल को "आपः" कहा गया है। एक प्रसिद्ध मंत्र है:
"आपो हि ष्ठा मयोभुवाः३" (ऋग्वेद 10.9.1)
अर्थः हे जल! तुम आनंददायक हो, हमें बल और ऊर्जा प्रदान करो।

ऋग्वेद में जल को औषधि, शुद्धिकर्ता और जीवन दायिनी शक्ति बताया गया है। जल को देवताओं के समान सम्मान दिया गया है।

2. यजुर्वेद में जल

यजुर्वेद में जल को पवित्रता और यज्ञ का आवश्यक अंग माना गया है। इसमें कहा गया है कि:
"जल सभी प्राणियों के जीवन का आधार है।"
यज्ञ और धार्मिक अनुष्ठानों में जल का प्रयोग शुद्धिकरण के लिए अनिवार्य बताया गया है।

3. अथर्ववेद में जल

अथर्ववेद में जल को औषधीय गुणों से युक्त बताया गया है–
"जल में रोग नाश करने की शक्ति है।"
यहाँ जल को स्वास्थ्य, समृद्धि और दीर्घायु का स्रोत माना गया है।

- वेदों के अनुसार जल का महत्व
- जल जीवन का मूल तत्व है।
- जल शुद्धता और पवित्रता का प्रतीक है।
- जल में औषधीय गुण विद्यमान हैं।
- जल का संरक्षण और सम्मान मानव का कर्तव्य है।

वेदों में जल को केवल भौतिक पदार्थ नहीं, बल्कि दैवीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। प्राचीन ऋषियों ने हजारों वर्ष पहले ही यह समझ लिया था कि **"जल ही जीवन है।"** आज के जल–संकट के समय वेदों का यह संदेश हमें जल संरक्षण और सदुपयोग की प्रेरणा देता है।

अदृश्य तत्वों का अनोखा मेलः कैसे बनता है जीवनदायी जल

जल पृथ्वी पर जीवन का आधार है। मनुष्य, पशु–पक्षी, वनस्पतियाँ और समस्त जीव–जगत इसके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते। वैज्ञानिक दृष्टि से जल केवल एक साधारण तरल नहीं, बल्कि एक महत्वपूर्ण रासायनिक यौगिक है, जो हाइड्रोजन और ऑक्सीजन नामक दो गैसों के मिलन से बनता है।

हाइड्रोजन एक अत्यंत हल्की और ज्वलनशील गैस है, जबकि ऑक्सीजन स्वयं नहीं जलती, लेकिन दहन को तीव्र करने में सहायता करती है और जीवों के श्वसन के लिए आवश्यक है। जब इन दोनों गैसों को उचित अनुपात में मिलाकर ऊर्जा प्रदान की जाती है, तो इनके अणुओं के पुराने बंधन टूट जाते हैं और नए बंधन बनते हैं। इसी प्रक्रिया से जल का अणु बनता है, जो दो हाइड्रोजन और एक ऑक्सीजन परमाणु से मिलकर बना होता है।

रसायन विज्ञान की दृष्टि से जल के गुण अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह एक उत्कृष्ट विलायक है, जिसमें अनेक पदार्थ घुल जाते हैं। यही गुण जीवित कोशिकाओं के भीतर होने वाली रासायनिक प्रक्रियाओं को संभव बनाता है और पृथ्वी की जलवायु को संतुलित रखने में भी सहायक होता है।

सबसे रोचक बात यह है कि हाइड्रोजन ज्वलनशील है और ऑक्सीजन आग को तेज करती है, लेकिन जब यही दोनों मिलती हैं तो परिणाम स्वरूप जल बनता है–वही जल जो आग को बुझाने में सहायक होता है और पृथ्वी पर जीवन को संभव बनाता है।

इस प्रकार हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का यह अद्भुत मिलन हमें प्रकृति के वैज्ञानिक रहस्यों से परिचित कराता है और बताता है कि जल वास्तव में जीवन की आधारशिला है।

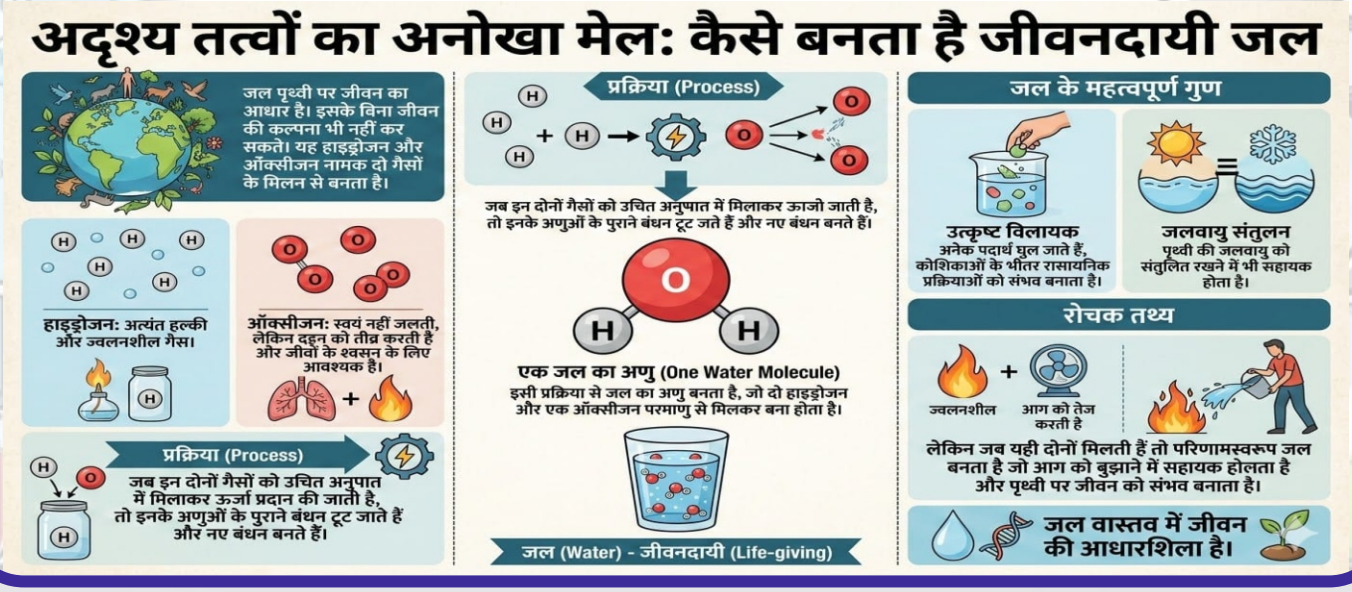

प्रति बूंद अधिक फसलः
सूक्ष्म सिंचाई का वैज्ञानिक और व्यवहारिक दर्शन

कल्पना कीजिए कि एक प्यासे व्यक्ति को बाल्टी भर पानी से नहला दिया जाए, लेकिन उसे पीने के लिए एक बूंद भी न मिले। पारंपरिक कृषि में पौधों के साथ अक्सर ऐसा ही विरोधाभास होता है। हम 'फ्लड इरिगेशन' (Flood Irrigation) या जल–प्लावन विधि के माध्यम से पूरे खेत को पानी से भर देते हैं। इससे मिट्टी की ऊपरी सतह तो जलमग्न हो जाती है, किंतु पानी का एक बड़ा हिस्सा या तो तीव्र सौर ताप से वाष्पीकृत होकर उड़ जाता है या गुरुत्वाकर्षण के कारण भूमि की उन गहराइयों में रिस जाता है जहाँ पौधों की जड़ें पहुँच ही नहीं पातीं। इसी अपव्यय का सटीक और वैज्ञानिक समाधान है–ड्रिप इरिगेशन (Drip Irrigation) अथवा टपक सिंचाई।

यह तकनीक पौधों को 'नहलाने' के बजाय उन्हें 'पिलाने' के सिद्धांत पर आधारित है। इसमें पाइपों का एक सुनियोजित जाल बिछा होता है, जिसके एमिटर्स (Emitters) ठीक पौधे के 'रूट जोन' (जड़ क्षेत्र) के पास स्थित होते हैं। यहाँ से पानी बूंद–बूंद करके सीधे उसी स्थान पर गिरता है जहाँ उसकी सर्वाधिक आवश्यकता होती है। इस विधि से जल का अपव्यय लगभग शून्य हो जाता है। जहाँ पारंपरिक सतही सिंचाई में 60 प्रतिशत तक जल व्यर्थ चला जाता है, वहीं ड्रिप तकनीक 90 प्रतिशत से अधिक 'जल उपयोग दक्षता' सुनिश्चित करती है।

इस पद्धति की सबसे क्रांतिकारी विशेषता 'फर्टिगेशन' (Fertigation) है। इसमें उर्वरकों को अलग से देने की मशक्कत नहीं करनी पड़ती; जल में ही आवश्यक पोषक तत्वों को घोल दिया जाता है, जो सीधे जड़ों तक पहुँचकर पौधों को त्वरित पोषण प्रदान करते हैं। इससे न केवल उर्वरक की लागत में कमी आती है, बल्कि खरपतवार की समस्या भी स्वतः नियंत्रित हो जाती है, क्योंकि शुष्क स्थानों पर अवांछित घास को पनपने का अवसर ही नहीं मिलता।

विशेषकर हमारे पहाड़ी भूगोल और सीमित जल संसाधनों वाले क्षेत्रों के लिए यह तकनीक एक वरदान है। यहाँ ढालदार खेतों में गुरुत्वाकर्षण का बुद्धिमानी से उपयोग कर, बिना किसी अतिरिक्त ऊर्जा व्यय के भी सिंचाई की जा सकती है। जब जल की प्रत्येक बूंद का सटीक प्रबंधन होता है, तो न केवल फसल की गुणवत्ता सुधरती है, बल्कि पैदावार में भी 30 से 40 प्रतिशत तक की उत्साहजनक वृद्धि देखी जाती है। अंततः, ड्रिप इरिगेशन मात्र खेती का एक विकल्प नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाकर चलने की एक अनिवार्य वैज्ञानिक कला है।

वर्षा जल संचयनः
भविष्य की संजीवनी

आज जब दुनिया की नदियाँ सूख रही हैं और भू–जल स्तर पाताल की ओर जा रहा है, तब वर्षा जल संचयन (Rainwater Harvesting) हमारे पास प्रकृति का दिया हुआ सबसे सरल और प्रभावी समाधान है। यह केवल पानी बचाने की तकनीक नहीं, बल्कि भविष्य को सुरक्षित करने का एक महा–संकल्प है।

क्यों है यह अनिवार्य?

प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने हमें उस मोड़ पर खड़ा कर दिया है जहाँ 'पानी' सोने से भी अधिक कीमती हो गया है। वर्षा का वह जल जो नालियों में बहकर व्यर्थ हो जाता है, उसे सहेजकर हम न केवल अपनी दैनिक जरूरतों को पूरा कर सकते हैं, बल्कि धरती की प्यास भी बुझा सकते हैं।

संचयन के मुख्य लाभः

भू–जल का पुनर्भरणः जमीन के नीचे घटते जल स्तर को सुधारने का एकमात्र प्राकृतिक तरीका।

आर्थिक बचतः पानी के टैंकरों और भारी भरकम बिलों से मुक्ति।

गुणवत्ताः बारिश का पानी प्राकृतिक रूप से कोमल (Soft Water) होता है, जो पौधों और घरेलू कार्यों के लिए उत्तम है।

बाढ़ नियंत्रणः शहरों में जल भराव की समस्या को कम करने में सहायक।

हमारा दायित्व

हमें अपने घरों की छतों पर 'रूफटॉप हार्वेस्टिंग' सिस्टम अपनाना चाहिए। पाइपों के माध्यम से छत के पानी को टैंकों या सोखने वाले गड्ढों तक पहुँचाना एक छोटा सा निवेश है, जिसका लाभ आने वाली कई पीढ़ियाँ उठाएंगी।

सरोवर विज्ञानः
जल संरक्षण और जीवन का आधार

आज के आधुनिक युग में जहाँ एक ओर हम तकनीकी विकास की सीढ़ियाँ चढ़ रहे हैं, वहीं दूसरी ओर जीवन के आधारभूत तत्व 'जल' के संकट से भी जूझ रहे हैं। ''बिन पानी सब सून'' की कहावत आज धरातल पर चरितार्थ होती दिख रही है। ऐसे में सरोवर विज्ञान (Limnology) का अध्ययन न केवल एक शैक्षणिक विषय है, बल्कि यह मानव अस्तित्व को बचाने की एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

सरोवर विज्ञान क्या है?

सरोवर विज्ञान, जिसे अंग्रेजी में 'Limnology' कहा जाता है, अंतःस्थलीय जल निकायों (जैसे नदियाँ, झीलें, तालाब और पोखर) के पारिस्थितिक, भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों का विस्तृत अध्ययन है। स्विट्जरलैंड के वैज्ञानिक एफ. ए. फोरेल को इस विज्ञान का जनक माना जाता है। यह विषय हमें सिखाता है कि किस प्रकार एक जल स्रोत अपनी पूरी जैव–विविधता के साथ जीवित रहता है और हमें जीवन प्रदान करता है।

जल संकटः एक कड़वी सच्चाई

पृथ्वी का लगभग 71 प्रतिशत भाग जल से ढका है, लेकिन इसमें से केवल 0.6 प्रतिशत जल ही मानवोपयोगी और पीने योग्य है। शेष जल खारा है या ग्लेशियरों के रूप में जमा है। बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण और कृषि कार्यों में जल के अंधाधुंध दोहन ने मीठे पानी के इन सीमित स्रोतों को गंभीर खतरे में डाल दिया है।

जल के गुण और पारिस्थितिकी

सरोवर विज्ञान जल के तीन मुख्य गुणों पर प्रकाश डालता हैः

- **भौतिक गुणः** जल का तापमान, रंग और प्रकाश की प्रवेश क्षमता।
- **रासायनिक गुणः** जल में घुली ऑक्सीजन, pH मान, नाइट्रोजन, फास्फोरस और खनिजों की उपस्थिति।
- **जैविक गुणः** जल में रहने वाले पादप प्लवक (Phytoplankton), जन्तु प्लवक और मछलियों का जटिल जाल (Food Chain)।

जब इन गुणों में असंतुलन पैदा होता है, तो जल प्रदूषित हो जाता है। आज भारत के हजारों गाँव फ्लोराइड, आर्सेनिक और लेड जैसे घातक रसायनों से युक्त पानी पीने को मजबूर हैं।

सरोवर विज्ञान की महती आवश्यकता क्यों?

सरोवर विज्ञान का ज्ञान हमें निम्नलिखित क्षेत्रों में समाधान प्रदान करता है:

स्वास्थ्य सुरक्षा: दूषित जल से होने वाली बीमारियाँ (पेचिश, हैजा, पीलिया) हर साल लाखों मासूम बच्चों की जान लेती हैं। सरोवर विज्ञान द्वारा जल शुद्धिकरण के सही तरीकों को अपनाकर इन मौतों को रोका जा सकता है।

खाद्य सुरक्षा और प्रसंस्करण: जलीय जीवों की जैव–विविधता भोजन श्रृंखला को बनाए रखती है। शुद्ध जल खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों के लिए भी अनिवार्य है।

औद्योगिक और ऊर्जा क्षेत्र: बिजली उत्पादन (पनबिजली) और थर्मल पावर प्लांट में कूलिंग के लिए जल प्रबंधन इसी विज्ञान पर आधारित है।

मनोरंजन और पर्यटन: नदियाँ और झीलें न केवल पर्यावरण को संतुलित रखती हैं, बल्कि पर्यटन और मानसिक शांति का भी केंद्र हैं।

''जीवों जीवस्य भोजनम'' के सिद्धांत के अनुसार, प्रकृति में हर जीव एक–दूसरे पर निर्भर है। यदि हमारे जल स्रोत–नदियाँ, तालाब और झीलें–प्रदूषित होंगे, तो यह पूरी भोजन श्रृंखला को नष्ट कर देगा। सरोवर विज्ञान के सिद्धांतों को अपनाकर हम न केवल वर्षा जल का संचयन कर सकते हैं, बल्कि मृत प्राय हो चुके जल निकायों को पुनर्जीवित भी कर सकते हैं।

समय की मांग है कि हम सरोवर विज्ञान के महत्व को समझें और अपनी भावी पीढ़ी के लिए 'नीला सोना' (जल) सुरक्षित रखें।

नचिकेता ताल:
उत्तरकाशी की एक अनमोल नैसर्गिक धरोहर

उत्तरकाशी जनपद में समुद्र तल से 2,390 मीटर की ऊँचाई पर स्थित नचिकेता ताल न केवल अपनी पौराणिक कथाओं के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि यह वैज्ञानिकों के लिए प्रकृति को समझने का एक जीवंत केंद्र भी है। घने वनों के बीच स्थित यह झील इतनी शुद्ध है कि इसे वैज्ञानिक शब्दावली में 'ओलिगोट्रॉफ़िक' (Oligotrophic) झील कहा जाता है, जिसका अर्थ है—कम पोषक तत्वों वाली एक अत्यंत स्वच्छ झील।

1. जल की गुणवत्ता और 'घुलित ऑक्सीजन' (Dissolved Oxygen)

किसी भी झील का स्वास्थ्य उसमें घुली हुई ऑक्सीजन पर निर्भर करता है। नचिकेता ताल में घुलित ऑक्सीजन का स्तर काफी अच्छा रहता है, जो जलीय जीवों के लिए प्राणवायु का काम करता है।

तापमान का प्रभाव: विज्ञान के अनुसार, पानी जितना ठंडा होगा, उसमें ऑक्सीजन उतनी ही अधिक घुलेगी। इसीलिए सर्दियों में यह झील जलीय जीवन के लिए सबसे अधिक अनुकूल होती है।

पारदर्शिता: सर्दियों और वसंत में झील का पानी आईने की तरह साफ होता है, जिससे सूरज की रोशनी गहराई तक पहुँचती है और प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis) की प्रक्रिया को बढ़ावा देती है।

2. प्राथमिक उत्पादकता: ऊर्जा का स्रोत

झील की खाद्य श्रृंखला का आधार सूक्ष्म पौधे और पादप प्लवक (Phytoplankton) होते हैं।

ऊर्जा उत्पादन: ये सूक्ष्म जीव सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा बनाते हैं। शोध के अनुसार, नचिकेता ताल में ऊर्जा का उत्पादन सर्दियों में सबसे अधिक और मानसून (बरसात) में सबसे कम होता है।
कारण: बरसात में पानी में मिट्टी मिलने (मटमैलापन या Turbidity) के कारण धूप गहराई तक नहीं पहुँच पाती, जिससे ऊर्जा उत्पादन की दर धीमी हो जाती है।

3. वनस्पतियों का अनोखा संसार

नचिकेता ताल के आस—पास का क्षेत्र फर्न (Pteridophytes) की प्रजातियों के लिए एक सुरक्षित आश्रय स्थल है।

54 प्रजातियां: यहाँ फर्न की 54 अलग—अलग प्रजातियां पाई गई हैं। इनमें 'पॉलीपोडिएसी' परिवार के पौधे सबसे अधिक हैं।

दुर्लभ पौधे: यहाँ Loxogramma involuta और Woodsia elongata जैसे दुर्लभ फर्न मिलते हैं, जो उत्तरकाशी जिले में बहुत कम स्थानों पर देखे जाते हैं।
वन आवरण: झील के चारों ओर मोरू ओक, देवदार और बुरांश के सघन वन पाए जाते हैं। बुरांश के पत्तों का झील में गिरना और सड़ना यहाँ के प्राकृतिक चक्र का एक अहम हिस्सा है।

4. भौतिक और रासायनिक कारक (Physicochemical Factors)

झील के वातावरण को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक इस प्रकार हैं:
तापमान: यहाँ का औसत तापमान 7°C से 25°C के बीच रहता है।
कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2): मानसून के समय जब धूप कम होती है और प्रकाश संश्लेषण धीमा पड़ता है, तो पानी में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा थोड़ी बढ़ जाती है।
इतिहास: भू–वैज्ञानिकों का मानना है कि यह ताल कभी एक विशाल झील का हिस्सा था, जो समय के साथ नचिकेता और काना ताल के रूप में विभाजित हो गया।

सारांश:

नचिकेता ताल का शुद्ध वातावरण, संतुलित ऑक्सीजन स्तर और यहाँ की दुर्लभ वनस्पतियां इसे हिमालय की एक विशिष्ट धरोहर बनाती हैं। इस संवेदनशील पारिस्थितिक तंत्र का संरक्षण करना हमारा सामूहिक कर्तव्य है ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी प्रकृति के इस अद्भुत संतुलन को देख और समझ सकें।

राष्ट्रीय धरोहर गंगा:
विज्ञान, आस्था और भविष्य की चुनौतियाँ

गंगा नदी भारत की केवल एक नदी नहीं, बल्कि एक अद्भुत प्राकृतिक फिल्टर है। सदियों से हम जानते हैं कि गंगा का जल कभी खराब नहीं होता, लेकिन आज के दौर में विज्ञान ने इसके पीछे के छिपे हुए रहस्यों और इसके सामने आने वाले नए खतरों को उजागर किया है।

1. गंगा जल कभी खराब क्यों नहीं होता? (बैक्टीरियोफेज का जादू)

गंगा के पानी में 'बैक्टीरियोफेज' (Bacteriophages) नामक बहुत ही छोटे और अनोखे वायरस पाए जाते हैं। ये इंसान को नुकसान नहीं पहुँचाते, बल्कि पानी में पनपने वाले हानिकारक बैक्टीरिया (कीटाणुओं) को खाकर नष्ट कर देते हैं।

इसी वजह से गंगा का पानी प्राकृतिक रूप से शुद्ध रहता है और इसमें कभी बदबू नहीं आती।

2. ऑक्सीजन की प्रचुरता: बहता हुआ प्राणवायु

वैज्ञानिकों (CPCB) ने पाया है कि गंगा के पानी में घुलित ऑक्सीजन (Dissolved Oxygen) की मात्रा अन्य नदियों के मुकाबले बहुत ज्यादा है।

हरिद्वार और ऋषिकेश जैसे ऊंचे स्थानों पर जब पानी पत्थरों से टकराकर तेजी से बहता है, तो हवा की ऑक्सीजन इसमें घुल जाती है। यह ऑक्सीजन पानी को साफ रखने और जलीय जीवों को जीवित रखने में मदद करती है।

3. नया खुलासा: गंगा को कौन जीवित रखता है? (2025 की खोज)

IIT रुड़की के ताज़ा शोध (अक्टूबर 2025) ने एक चौंकाने वाली बात बताई है। अब तक हम मानते थे कि गर्मियों में गंगा का पानी सिर्फ हिमालय के ग्लेशियरों के पिघलने से आता है। लेकिन शोध कहता है कि गर्मियों में गंगा के बहाव का मुख्य आधार 'भूजल' (Groundwater) है। यानी धरती के नीचे का पानी ही गंगा को सूखने से बचाता है। इसलिए गंगा को बचाने के लिए हमें ज़मीन के नीचे के पानी (Aquifers) को बचाना सबसे जरूरी है।

4. 1300 वर्षों का सबसे बड़ा संकट (PNAS रिपोर्ट)

वर्ष 2025–26 के नए आंकड़ों के अनुसार, पिछले 30 सालों (1991–2020) में गंगा ने पिछले 1300 वर्षों का सबसे भीषण सूखा देखा है।

मानवीय गतिविधियों और जलवायु परिवर्तन के कारण नदी का बहाव पहले के मुकाबले बहुत कम (लगभग 76 प्रतिशत तक की गिरावट) हुआ है।

5. प्रदूषण का नया दुश्मनः माइक्रोप्लास्टिक

हालिया अध्ययनों से पता चला है कि गंगा के पानी और तलछट (मिट्टी) में 'माइक्रोप्लास्टिक' (प्लास्टिक के बेहद सूक्ष्म कण) पाए गए हैं। ये कण इतने छोटे होते हैं कि नंगी आँखों से नहीं दिखते, लेकिन ये हमारी सेहत और नदी के प्राकृतिक तंत्र के लिए बहुत खतरनाक हैं।

सुझावः

गंगा का अस्तित्व खतरे में है, लेकिन इसे बचाया जा सकता है। विज्ञान हमें सलाह देता है कि–

- हमें भूजल (Groundwater) का अंधाधुंध इस्तेमाल रोकना होगा।
- प्लास्टिक कचरे को नदी में जाने से पूरी तरह रोकना होगा।
- गंगा के बैक्टीरियोफेज और ऑक्सीजन के स्तर को बनाए रखने के लिए इसकी निर्मलता पर ध्यान देना होगा।

नीली क्रांति का संकल्पः
स्वच्छ जल और गरिमापूर्ण जीवन (SDG 6)

संयुक्त राष्ट्र का वैश्विक लक्ष्य 6 (SDG 6) केवल एक सरकारी आँकड़ा नहीं, बल्कि मानवता के सुरक्षित भविष्य का घोषणापत्र है। यह लक्ष्य हमें याद दिलाता है कि स्वच्छ जल और बेहतर स्वच्छता (Sanitation) केवल बुनियादी सुविधाएँ नहीं, बल्कि हर इंसान का जन्मसिद्ध अधिकार हैं। 2030 तक इस लक्ष्य को हासिल करने का मतलब है–बीमारियों पर लगाम, बच्चों के लिए बेहतर शिक्षा और महिलाओं के लिए सम्मान जनक जीवन।

आज जब हम समावेशी नवाचार की बात करते हैं, तो इसका अर्थ है ऐसी तकनीकें विकसित करना जो शहर के आधुनिक घरों से लेकर पहाड़ों की दुर्गम बस्तियों तक, हर किसी की प्यास बुझा सकें। जल संकट का सबसे गहरा प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर पड़ता है, जिनका कीमती समय सिर्फ पानी के इंतजाम में बीत जाता है। ऐसे में सौर ऊर्जा से चलने वाले पंप, कम लागत वाले वाटर फिल्टर और वर्षा जल संचयन (Rainwater Harvesting) जैसी वैज्ञानिक विधियाँ इस संकट का स्थायी समाधान पेश करती हैं।

हमारे उत्तराखंड जैसे क्षेत्रों में 'नौला' और 'धारे' जैसे पारंपरिक जल स्रोतों का वैज्ञानिक पुनरुद्धार इसी वैश्विक लक्ष्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। तकनीक और स्थानीय ज्ञान का मेल ही वह जादुई चाबी है, जो पानी की बर्बादी रोक सकती है और जल की शुद्धता सुनिश्चित कर सकती है। वर्ष 2026 की थीम 'जल और लिंग' हमें यही संदेश देती है कि जब जल प्रबंधन की बागडोर समाज के हर वर्ग के हाथ में होगी, तभी 2030 का यह सपना हकीकत बनेगा।

हिमालयी जल स्रोतों का संरक्षणः नौले–धारों की परंपरा

हिमालयी क्षेत्र में जल केवल एक प्राकृतिक संसाधन नहीं बल्कि संस्कृति, परंपरा और जीवन का आधार रहा है। उत्तराखंड के गांवों में सदियों से पेयजल की व्यवस्था नौले, धारे, गधेरे और प्राकृतिक स्रोतों के माध्यम से होती रही है। यह परंपरा केवल तकनीकी व्यवस्था नहीं थी, बल्कि प्रकृति और समाज के बीच संतुलित संबंध का प्रतीक थी।

पहले समय में किसी भी नए कार्य या घर के निर्माण से पहले नौला पूजन किया जाता था और वहां से शुद्ध जल लाकर शुभ कार्यों की शुरुआत की जाती थी। नौले पत्थर और मिट्टी से बने छोटे जल–संग्रहण ढांचे होते हैं, जिनमें पहाड़ों के भीतर से निकलने वाला स्वच्छ जल एकत्रित होता है। इनका निर्माण इस प्रकार किया जाता था कि पानी सुरक्षित रहे, सूर्य की सीधी किरणें न पड़ें और जल की शीतलता बनी रहे।

समय के साथ आधुनिक जलापूर्ति प्रणालियों और बढ़ते शहरीकरण के कारण इन पारंपरिक जल स्रोतों की उपेक्षा होने लगी। कई स्थानों पर नौले–धारों को बंद कर दिया गया या उन्हें सीमेंट से ढक दिया गया, जिसके कारण जल स्रोत धीरे–धीरे सूखने लगे। जंगलों की कटाई, अनियंत्रित निर्माण और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से भी हिमालयी क्षेत्रों में जल संकट बढ़ रहा है।

हिमालय की नदियाँ भी इन्हीं छोटे–छोटे स्रोतों, धारों और झरनों से मिलकर बनती हैं। यदि इन स्रोतों का संरक्षण नहीं किया गया तो भविष्य में नदियों के जलस्तर पर भी इसका गंभीर प्रभाव पड़ेगा। इसलिए आवश्यक है कि जल संरक्षण के पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक तकनीक के बीच संतुलन स्थापित किया जाए।

नौला फाउंडेशन जैसे संगठन इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। इनके प्रयासों से उत्तराखंड के कई गांवों में नौले–धारों का पुनर्जीवन किया जा रहा है और लोगों को जल संरक्षण के प्रति जागरूक किया जा रहा है। स्थानीय समुदाय की भागीदारी से जल स्रोतों की सफाई, जलग्रहण क्षेत्रों का संरक्षण और वर्षा जल संचयन जैसे कार्य किए जा रहे हैं।

- **नौले–धारों के संरक्षण के लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम आवश्यक हैं–**
- प्राकृतिक जल स्रोतों और उनके जलग्रहण क्षेत्रों का संरक्षण
- जल स्रोतों के आसपास वृक्षारोपण और हरित क्षेत्र बढ़ाना

- पारंपरिक जल संरचनाओं का पुनर्निर्माण और संरक्षण
- वर्षा जल संचयन को बढ़ावा देना
- स्थानीय समुदाय को जल प्रबंधन में भागीदारी देना

हिमालयी क्षेत्रों की जल सुरक्षा केवल सरकारी योजनाओं से संभव नहीं है। इसके लिए समाज, समुदाय और संस्थाओं को मिलकर प्रयास करना होगा। जब हम अपने पारंपरिक जल स्रोतों को बचाएंगे, तभी आने वाली पीढ़ियों के लिए जल की उपलब्धता सुनिश्चित कर पाएंगे।

अंततः, जल संरक्षण केवल पर्यावरण की आवश्यकता नहीं बल्कि हमारे अस्तित्व की सुरक्षा का संकल्प है। यदि नौले–धारे सुरक्षित रहेंगे तो गांव, खेत, जंगल और पूरा हिमालय सुरक्षित रहेगा।

द्वारिका प्रसाद सेमवाल:
"कल के लिए जल" से जलजन–आंदोलन तक

द्वारिका प्रसाद सेमवाल
उत्तरकाशी गाजणा क्षेत्र निवासी व
जी.आई.सी. धौन्तरी के पूर्व छात्र

कल के लिए जल अभियान – जल संरक्षण के लिए हमारे बुजुर्गों द्वारा स्थापित चाल, खाल जैसी जल संरक्षण की परंपरा को पुनर्जीवित करने की दिशा में आम एवं खास जन को भावनात्मक रूप से जोड़ कर सफल अभिनव प्रयोग किया गया। आज आम एवं खास लोग जल संरक्षण की महत्ता को समझ कर अपने जन्मदिन, जीवन के विशेष दिन को यादगार बनाने एवं प्रियजनों की याद में श्रमदान कर कच्चे तालाब एवं जल कुंड बना रहे हैं। इस विचार को आगे बढ़ाने के लिए वर्ष 2021 में कल के लिए जल अभियान शुरू किया गया।

अभियान के अंतर्गत विभिन्न स्थानों पर 5500 जल कुंड बनाए गए एवं वर्ष 2023 में अभियान से प्रेरित होकर जिला प्रशासन एवं पंचायतों, स्वैच्छिक संगठनों , सरकारी विभागों ने कुल एक लाख अड़तीस हजार जल कुंड एवं खंती श्रमदान कर बनाए। जल वर्ष 2025 – आम एवं खास लोगों को जल संरक्षण से जोड़ने के लिए वर्ष 2025 को जल वर्ष के रूप में मनाया गया। एक विद्यालय एक जल स्रोत – जल वर्ष 2025 के अवसर पर एक विद्यालय एक जल स्रोत गतिविधि शुरू की गई, राज्य में अभी तक 10 विद्यालयों ने 20 जल स्रोत गोद लिए है, जिसके कैचमेंट में गोद लेने वाले विद्यालय के बच्चे जल कुंड बनाते है और बनाए गए जल कुंडो की सफाई करते है

जल पूजन जल वर्ष के अवसर पर जल स्रोतों के पूजन कार्यक्रम शुरू किया गया। इसका उद्देश्य यही है कि छात्र जल की महत्ता को जाने। जल नायक जल वर्ष के अवसर पर जल संरक्षण के लिए समर्पित आम एवं खास लोगों को जल नायक बनाए जा रहे है, ताकि आने वाले समय में जल संरक्षण को लेकर बड़े स्तर पर चर्चा हो सके। सबसे पहले माननीय मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी जल नायक बने।

जल चक्र:
प्रकृति का अद्भुत वैज्ञानिक चक्र

जल चक्र (Water Cycle) पृथ्वी पर मौजूद जल की एक कभी न खत्म होने वाली यात्रा है। यह एक ऐसी प्राकृतिक मशीन की तरह है जो करोड़ों सालों से बिना रुके काम कर रही है और पृथ्वी पर जीवन को संभव बना रही है।

आइए, इस अद्भुत वैज्ञानिक प्रक्रिया के मुख्य चरणों को विस्तार से समझते हैं:

1. वाष्पीकरण (Evaporation):

जल चक्र की शुरुआत सूर्य की ऊर्जा से होती है। जब सूरज की गर्मी नदियों, झीलों और समुद्र के पानी पर पड़ती है, तो वह गर्म होकर भाप (वाष्प) में बदल जाता है। यह अदृश्य भाप हल्की होने के कारण ऊपर आकाश की ओर उठने लगती है।

वाष्पोत्सर्जन (Transpiration): पौधों की पत्तियों से भी अतिरिक्त पानी भाप बनकर उड़ता है, जिसे वाष्पोत्सर्जन कहते हैं।

2. संघनन (Condensation):

जैसे–जैसे जलवाष्प आकाश में ऊपर जाती है, तापमान कम होने के कारण वह ठंडी होने लगती है। ठंडी होकर यह भाप फिर से पानी की नन्हीं बूंदों में बदल जाती है। ये बूंदें धूल के कणों के साथ मिलकर बादलों का निर्माण करती हैं।

3. वर्षण (Precipitation):

जब बादलों में पानी की बूंदें बहुत अधिक जमा हो जाती हैं और भारी हो जाती हैं, तो वे हवा में टिक नहीं पातीं। तब वे गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे गिरने लगती हैं। इसे ही हम वर्षा (बारिश) कहते हैं। अत्यधिक ठंड होने पर यही पानी बर्फ या ओलों के रूप में गिरता है।

4. संग्रहण और भूजल (Collection and Infiltration):

वर्षा का जल पहाड़ों से बहकर नदियों और झरनों के माध्यम से वापस समुद्र में मिल जाता है। कुछ पानी जमीन के अंदर रिस जाता है, जिसे भूजल (Groundwater) कहते हैं। यह भूजल हमारे कुओं और नलों के लिए मीठे पानी का मुख्य स्रोत होता है।

जल चक्र का महत्व:

मीठे पानी की आपूर्ति: समुद्र का पानी खारा होता है, लेकिन जल चक्र के माध्यम से हमें पीने योग्य शुद्ध और मीठा पानी प्राप्त होता है।

तापमान का संतुलनः यह चक्र पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित रखने में मदद करता है।

पारिस्थितिकी तंत्रः जंगलों, खेती और पशु–पक्षियों के अस्तित्व के लिए यह चक्र अनिवार्य है।

जल चक्र यह दर्शाता है कि प्रकृति में कुछ भी व्यर्थ नहीं जाता। आज हम जो पानी पी रहे हैं, वह करोड़ों वर्षों से इसी चक्र का हिस्सा रहा है। इसलिए, जल का संरक्षण करना और इसे प्रदूषित होने से बचाना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

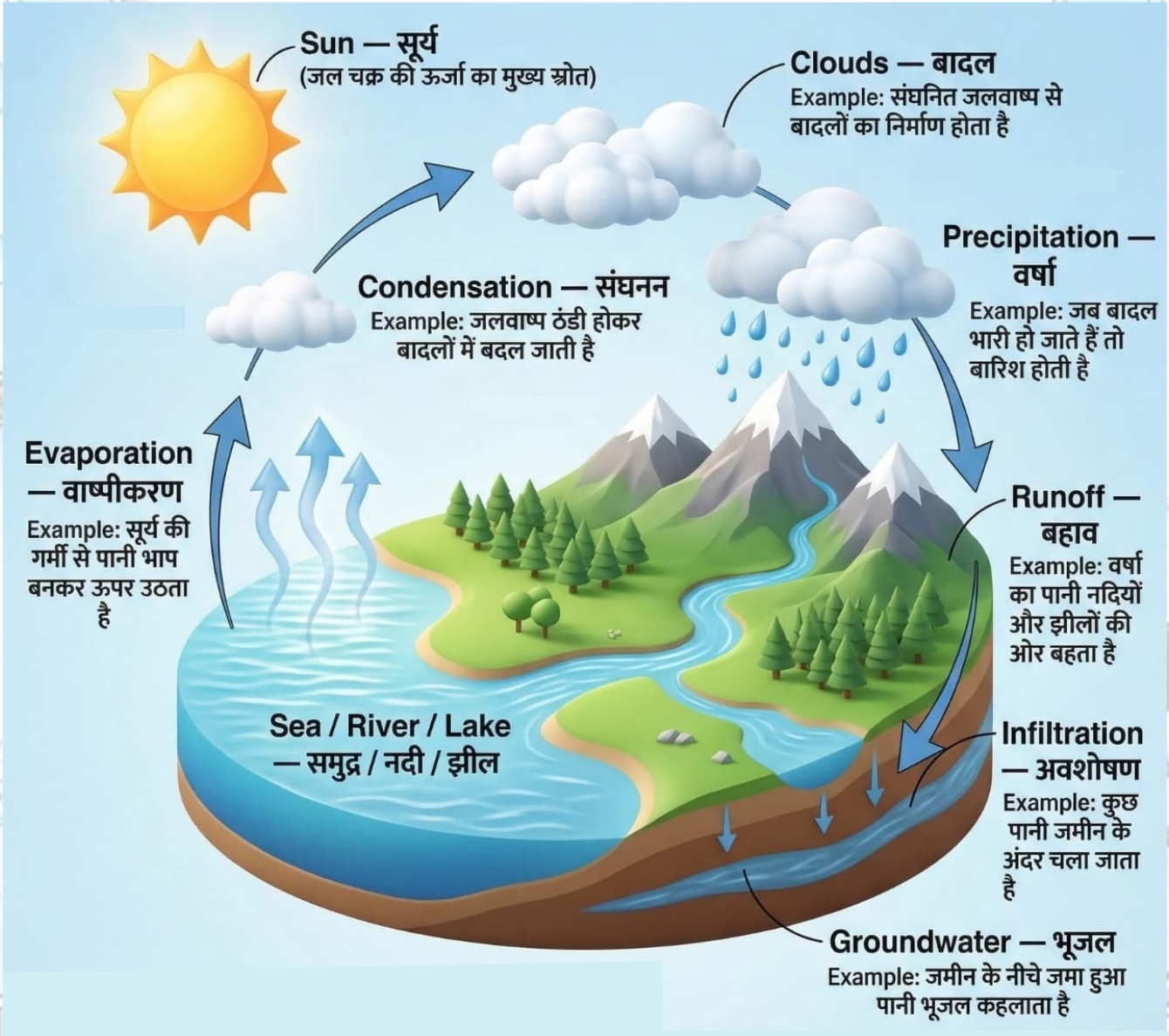

Water Cycle (जल चक्र)

उच्च हिमालयी झील सहस्त्रताल:

सहस्त्रताल उत्तराखंड के उच्च हिमालय में स्थित एक अद्भुत प्राकृतिक झील है, जिसे महात्म्य ताल, दर्शनताल तथा भीमताल के नाम से भी जाना जाता है। समुद्र तल से लगभग 4611 मीटर की ऊँचाई पर स्थित यह झील उत्तरकाशी और टिहरी जनपदों की सीमा पर स्थित है। हिमालय की शांत गोद में बसे इस क्षेत्र का प्राकृतिक वैभव, पौराणिक महत्त्व और रहस्यमयी वातावरण इसे विशेष बनाते हैं।

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार एक राजा ने भगवान विष्णु को एक हजार ब्रह्मकमल पुष्प अर्पित कर इस झील के तट पर विशेष अनुष्ठान किया था, इसी कारण इसका नाम सहस्त्रताल पड़ा। स्कंद पुराण के केदारखंड में भी इस क्षेत्र का उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि यहाँ बालखिल्य ऋषि ने कठोर तपस्या की थी, इसलिए इसी क्षेत्र से निकलने वाली नदी को बालगंगा कहा जाता है। मान्यता यह भी है कि धर्मराज युधिष्ठिर स्वर्गारोहण के लिए इसी मार्ग से आगे बढ़े थे, इसलिए यहाँ से निकलने वाली दूसरी धारा धर्मगंगा कहलाती है। आगे चलकर बालगंगा और धर्मगंगा दोनों का संगम टिहरी जनपद के बूढ़ाकेदार में होता है।

नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ एक हजार झीलें होंगी, यद्यपि वास्तविकता में सहस्त्रताल एक मुख्य झील है जिसके आसपास कई छोटे–छोटे ताल फैले हुए हैं। ये सभी झीलें हिमालयी परिदृश्य के बीच पर्यटकों और ट्रैकर्स को आश्चर्यचकित कर देती हैं और आज भी अपने भीतर अनेक रहस्य समेटे हुए हैं।

सहस्त्रताल तक पहुँचने के लिए लगभग 50 किलोमीटर की पैदल यात्रा करनी पड़ती है। उत्तरकाशी से सिल्ला (भटवाड़ी) या कमद (डुण्डा) की ओर से बेलक चट्टी होते हुए कुश कल्याण तक पहुँचा जाता है। इन स्थानों पर यात्री रात्रि विश्राम करते हैं। बेलक चट्टी में पारंपरिक छानियों में ठहरने और भोजन की व्यवस्था मिल जाती है, जहाँ शुद्ध दूध की चाय, मट्ठा, मक्खन तथा देशी लाल चावल के साथ स्थानीय भोजन का स्वाद लिया जा सकता है।

यात्रा आगे बढ़ते हुए जोराई बुग्याल से होकर गुजरती है, जो लगभग 9 वर्ग किलोमीटर में

फैला हरा–भरा घास का मैदान है। इसके बाद कुश कल्याण बुग्याल आता है, जहाँ कुछ ठहरने की सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं। आगे बवानी बुग्याल पड़ता है, जहाँ सात घास और फूलों से भरे विस्तृत मैदान यात्रियों का मन मोह लेते हैं। इसके बाद झुण्डु घला की कठिन चढ़ाई आती है, जो अधिक ऊँचाई और कम ऑक्सीजन के कारण यात्रियों की परीक्षा लेती है।

इस मार्ग में द्रोपदी की कंठी, भैंसा का सिंग और क्यारकी बुग्याल जैसे अनेक रमणीय स्थल पड़ते हैं। क्यारकी बुग्याल इस पूरे ट्रेक का सबसे सुंदर और विस्तृत बुग्याल माना जाता है। यहाँ असंख्य प्रकार के पुष्प और जड़ी–बूटियाँ पाई जाती हैं। मानसून के समय इस क्षेत्र में हजारों ब्रह्मकमल और फेनकमल खिलते हैं, जिससे पूरा क्षेत्र अलौकिक सुंदरता से भर उठता है।

इसके बाद धर्मशाला और कुखली की चढ़ाई पार करने पर मामली ताल, मातृताल, मातृ उडार और नरसिंग ताल के दर्शन होते हैं और अंततः मुख्य झील महात्म्य ताल या सहस्त्रताल तक पहुँचा जाता है। सहस्त्रताल क्षेत्र में अनेक छोटे–छोटे ताल फैले हुए हैं, इसलिए इस पूरे क्षेत्र को सहस्त्रताल समूह कहा जाता है।

इस झील में भीलांगना नदी का उद्‌गम माना जाता है, जो आगे बहते हुए टिहरी क्षेत्र में भागीरथी से मिलती थी, किंतु टिहरी बाँध बनने के बाद अब इसका जल उसी जलाशय में समाहित हो जाता है।

सहस्त्रताल क्षेत्र वर्ष के अधिकांश समय बर्फ से ढका रहता है। लगभग नौ महीने तक यहाँ बर्फ जमी रहती है और सामान्यतः जून से अगस्त या सितंबर–अक्टूबर के बीच ही यहाँ पहुँचना संभव होता है। ऊँचाई अधिक होने के कारण यहाँ तापमान सामान्य से बहुत कम रहता है और वायुदाब की कमी के कारण ऑक्सीजन भी कम महसूस होती है।

यहाँ ठहरने की स्थायी व्यवस्था नहीं है, हालांकि एक बड़ी पत्थर की गुफा है जहाँ यात्री आवश्यकता पड़ने पर रात्रि विश्राम कर लेते हैं। सहस्त्रताल तक पहुँचने के लिए अन्य कठिन मार्ग भी हैं, जैसे बूढ़ाकेदार से महासरताल, अर्जुन की कुर्सी और देवा बुग्याल होते हुए क्यारकी बुग्याल पहुँचना या घुत्तू से गंगी और खतलिंग ग्लेशियर की ओर से आना। ये मार्ग अत्यंत दुर्गम हैं और बिना अनुभवी गाइड के इन पर यात्रा करना सुरक्षित नहीं माना जाता।

संक्षेप में कहें तो, सहस्त्रताल हिमालय की गोद में स्थित एक दुर्लभ प्राकृतिक धरोहर है, जहाँ पौराणिक आस्था, अद्‌भुत जैव विविधता, विशाल बुग्याल और रहस्यमयी झीलों का अद्वितीय संगम देखने को मिलता है। यह स्थान अनुभवी ट्रैकर्स और प्रकृति प्रेमियों के लिए एक अनमोल और अपेक्षाकृत कम चर्चित हिमालयी यात्रा का अवसर प्रदान करता है।

उत्तराखंड की लोक परंपरा में धारा पूजन का महत्व

उत्तराखंड की पावन देवभूमि में लोक–परंपराएं केवल कर्मकांड नहीं, बल्कि प्रकृति और मानवीय संवेदनाओं के बीच एक गहरा सेतु हैं। यहाँ का जन जीवन हिमालय की गोद में पनपा है, जहाँ जल, जंगल और जमीन को देवता तुल्य माना जाता है। इसी सांस्कृतिक विरासत का एक अत्यंत सुंदर और भावपूर्ण अध्याय है 'धारापूजन'। यह नवविवाहिता के ससुराल आगमन पर किया जाने वाला वह संस्कार है, जो स्त्री के नए जीवन की शुरुआत को प्रकृति के सबसे पवित्र तत्व–जल के साथ जोड़ता है।

जब एक नववधू विवाह के पश्चात पहली बार अपने ससुराल की दहलीज पर कदम रखती है, तो उसके गृह–प्रवेश के साथ ही धारापूजन का विधान किया जाता है। यह अनुष्ठान प्रायः विवाह के अगले दिन प्रातःकाल संपन्न होता है। पारंपरिक वेशभूषा और पिछौड़े में सजी दुल्हन, परिवार की सौभाग्यवती महिलाओं और गांव की कन्याओं के साथ मंगल गीत गाते हुए गांव के प्राकृतिक जलस्रोत–धारा या नौला की ओर प्रस्थान करती है।

इस पूजन की विधि जितनी सरल है, उतनी ही अर्थपूर्ण भी है। जलस्रोत पर पहुँचकर सबसे पहले उस स्थान को गाय के गोबर से लीपकर शुद्ध किया जाता है। इसके बाद हाथ की उंगलियों से 'ऐपण' बनाए जाते हैं, जो शुभता का प्रतीक हैं। नववधू रोली, अक्षत, पुष्प और धूप–दीप से जलदेवता की पूजा करती है। इस दौरान महिलाएं पारंपरिक 'शकुन आखर' और लोकगीत गाती हैं, जिनमें सीता और उर्मिला जैसी आदर्श नारियों का आह्वान कर वधू के लिए अखंड सौभाग्य की कामना की जाती है। पूजा के बाद दुल्हन तांबे या पीतल के पात्र में जल भरकर अपने सिर पर रखकर घर लाती है। इस जल को पूरे घर में छिड़का जाता है और बड़ों को पिलाकर उनका आशीर्वाद लिया जाता है।

धारा पूजन का सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक महत्व गहरा है। पहाड़ों में जीवन कठिन है और जल ही जीवन का आधार है। नए जीवन की शुरुआत में जल देवता को नमन करना यह दर्शाता है कि हमारा अस्तित्व प्रकृति की कृपा पर निर्भर है। इस बहाने नववधू पहली बार अपने घर से बाहर निकलकर गांव के सार्वजनिक स्थान और अन्य महिलाओं से परिचय प्राप्त करती है। यह उसके सामाजिक जुड़ाव का पहला कदम है। जैसे जल की धारा निरंतर बहती रहती है, वैसे ही वधू का सौभाग्य और वंश परंपरा अक्षुण्ण रहे–यही इस पूजा का मूल भाव है। लोकगीतों में दिए जाने वाले आशीष स्त्री की सृजन शीलता के प्रतीक हैं।

उत्तराखंड के विभिन्न अंचलों में इसकी अलग–अलग झलक मिलती है। गढ़वाल में इसे 'धारा माई' की पूजा कहा जाता है, तो कुमाऊँ में 'नौला पूजन'। जौनसार–बावर के क्षेत्रों में इसे स्थानीय देवताओं के साथ जोड़कर मनाया जाता है। स्वरूप चाहे जो भी हो, मूल भावना जल

संरक्षण की है। जो समाज अपने जल स्रोतों की पूजा करता है, वह कभी उन्हें प्रदूषित या नष्ट नहीं करता।

आज के आधुनिक युग में, जहाँ प्राकृतिक संसाधन सिमट रहे हैं, उत्तराखंड की धारा पूजन जैसी परंपराएं अत्यंत प्रासंगिक हैं। यह अनुष्ठान हमें याद दिलाता है कि स्त्री और प्रकृति दोनों ही जीवन की निर्मात्री हैं। नव विवाहिता द्वारा किया गया यह पूजन एक मौन संकल्प है—सृष्टि के संरक्षण का और परंपराओं के संवर्धन का। यदि हम अपनी इन लोक—जड़ों से जुड़े रहें, तो हमारी संस्कृति की यह पावन धारा सदैव अविरल बहती रहेगी।

जल साक्षरता के अग्रदूतः
डॉ. प्रमोद शर्मा और उनका 'भागीरथ' प्रयास

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के ऐतिहासिक परिवेश से निकले और वर्तमान में सी. एम.पी. डिग्री कॉलेज के रसायन विज्ञान विभाग में असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में कार्यरत डॉ. प्रमोद शर्मा आज जल संरक्षण की दिशा में एक सशक्त मशाल बन चुके हैं। बस्ती जनपद के छोटे से गाँव धनघटा से निकलकर प्रयागराज की संगम रेती तक का उनका सफर, केवल एक शैक्षणिक उपलब्धि नहीं है, बल्कि जल के प्रति एक समर्पित जीवन की गाथा है।

प्रारंभिक जीवन और प्रेरणाः

डॉ. शर्मा की उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हुई, जहाँ उन्होंने सी.एस. आई.आर. नेट जे आर एफ जैसी प्रतिष्ठित परीक्षा उत्तीर्ण की। उनके जीवन का निर्णायक मोड़ तब आया जब उन्होंने प्रो. दीनानाथ शुक्ल के निर्देशन में 'माँ गंगा' पर अपना शोध (Ph-D-) शुरू किया। इस कार्य की अटूट प्रेरणा उन्हें अपने पूज्य पिता स्व. रामानुज से मिली थी। छात्र जीवन से ही गंगा घाटों की स्वच्छता और जन–जागरूकता रैलियों में उनकी सक्रियता ने उन्हें भविष्य के 'वॉटर हीरो' के रूप में तैयार कर दिया था।

जल साक्षरतारू एक शैक्षणिक क्रांतिः

वर्ष 2018 में सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज में नियुक्ति के बाद, डॉ. शर्मा ने जल संरक्षण को किताबी ज्ञान से निकालकर धरातल पर उतारने का निर्णय लिया। उन्होंने कॉलेज में 'जल साक्षरता सर्टिफिकेट कोर्स' की शुरुआत की, जो शिक्षा जगत में अपनी तरह की एक अनूठी पहल है। डॉ. शर्मा का मानना है कि पानी केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि 'सभ्यता का आधार' है और आने वाली पीढ़ियों के लिए जल संकट सबसे बड़ी चुनौती होगी।

'जल साक्षरता का अर्थ केवल पानी बचाना नहीं है, बल्कि पानी के प्रति अपने व्यवहार और संस्कृति को बदलना है।' – **डॉ. प्रमोद शर्मा**

अभियान के मुख्य स्तंभ और पहलः

डॉ. शर्मा के नेतृत्व में जल संरक्षण को एक जन–आंदोलन बनाने के लिए कई व्यावहारिक कदम उठाए गए हैं:

जल शपथः कॉलेज में प्रवेश लेने वाले छात्रों को जल संरक्षण की शपथ दिलाई जाती है ताकि वे एक जिम्मेदार नागरिक बन सकें।

वॉटर ऑडिटः छात्रों को 'वॉटर ऑडिट' करना सिखाया जाता है, जिससे वे जान सकें कि प्रतिदिन कितने पानी की खपत और बर्बादी हो रही है।

पानी चौपालः डॉ. शर्मा के मार्गदर्शन में छात्र गाँवों और मोहल्लों में जाकर 'पानी चौपाल' लगाते हैं, जिससे समाज के अंतिम व्यक्ति तक जल चेतना पहुँचती है।

संगोष्ठी एवं कार्यशालाः राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर के सेमिनार आयोजित किए जाते हैं जहाँ विशेषज्ञ जल संकट के आधुनिक समाधानों पर चर्चा करते हैं।

जल साक्षरता का संदेशः बचाव, पुनर्चक्रण और पुनर्भरण

डॉ. शर्मा अक्सर अपने व्याख्यानों में 'बिन पानी सब सून' की अवधारणा को स्पष्ट करते हैं। उनके अनुसार जल साक्षरता के तीन मुख्य आधार हैं: बचाव (Reduce) यानी पानी के उपयोग में कटौती, पुनर्चक्रण (Recycle) यानी उपयोग किए गए पानी को साफ कर अन्य कार्यों में लेना, और पुनर्भरण (Recharge) यानी भूजल स्तर को बढ़ाने के लिए जमीन के अंदर पानी पहुँचाना।

प्रभाव और विस्तारः

आज डॉ. शर्मा की पहल केवल कॉलेज परिसर तक सीमित न रहकर प्रयागराज व समूचे संगम क्षेत्रों में एक आंदोलन का रूप ले चुकी है। उनके प्रयासों से निकले छात्र आज विभिन्न क्षेत्रों में 'जल दूत' के रूप में काम कर रहे हैं। उनके नेतृत्व में सी.एम.पी. कॉलेज को कई बार पर्यावरण संरक्षण और 'ग्रीन कैंपस' के लिए सराहा गया है। डॉ. प्रमोद शर्मा का कार्य इस बात का प्रमाण है कि यदि सही दिशा में संवाद हो, तो जल साक्षरता को घर–घर तक पहुँचाया जा सकता है। उनकी 'पानी चौपाल' और शैक्षणिक पहल 'जल ही जीवन है' के नारे को धरातल पर उतारने का एक सफल और अनुकरणीय प्रयास है।

विश्व वन्यजीव दिवस 2026 :
जल, जंगल और वन्य जीवन की साझा सुरक्षा

हर वर्ष 3 मार्च को विश्व भर में विश्व वन्यजीव दिवस मनाया जाता है। इस दिवस का उद्देश्य पृथ्वी पर मौजूद वन्य जीव–जंतुओं और वनस्पतियों के महत्व के प्रति जागरूकता फैलाना है। वन्यजीव केवल प्रकृति की सुंदरता का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि वे पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से जल, जंगल और वन्य जीवन एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 2013 में 3 मार्च को विश्व वन्यजीव दिवस के रूप में घोषित किया। इसी दिन 1973 में संकटग्रस्त प्रजातियों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार को नियंत्रित करने के लिए CITES समझौते पर हस्ताक्षर किए गए थे।

विश्व वन्यजीव दिवस 2026 की थीम है –
"Wildlife Conservation Finance: Investing in People and Planet-"

इसका अर्थ है कि वन्यजीवों और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए समाज, सरकार और संस्थाओं को मिलकर निवेश और प्रयास करने होंगे।

प्रकृति में जल स्रोत वन्यजीवों के जीवन का आधार होते हैं। नदियाँ, झीलें, झरने और वन क्षेत्रों के छोटे जल स्रोत अनेक पशु–पक्षियों के जीवन को बनाए रखते हैं। जंगल सुरक्षित रहते हैं तो जल स्रोत भी सुरक्षित रहते हैं, और जल सुरक्षित रहता है तो वन्यजीवों का अस्तित्व भी बना रहता है। इस प्रकार जल, जंगल और जीव–जंतु एक ही प्राकृतिक चक्र के हिस्से हैं। आज वनों की कटाई, जल स्रोतों का सूखना, प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन के कारण कई वन्य प्रजातियाँ संकट में हैं। हिमालयी क्षेत्रों में पाए जाने वाले कस्तूरी मृग, हिम तेंदुआ, मोनाल जैसे दुर्लभ जीव भी इन चुनौतियों से प्रभावित हो रहे हैं। विश्व वन्यजीव दिवस हमें यह समझने का अवसर देता है कि यदि हम जल और जंगलों की रक्षा करेंगे, तो वन्यजीव स्वतः सुरक्षित रहेंगे। इसलिए प्रकृति के इन तीनों आधारों–जल, जंगल और जीव–की रक्षा करना हम सबकी साझा जिम्मेदारी है।

प्रकृति का संतुलन तभी संभव है, जब जल सुरक्षित हो, जंगल सुरक्षित हों और वन्य जीवन संरक्षित रहे।